रीति-शृंगार

सम्पादक

डा० नगेन्द्र, एम० ए०. डी० लिट्

प्रकाशक

साहित्य - सदन,

चिरगाँव, (झाँसी)

विषय-सूची

क्रमसंख्या	विषय	पृष्ठसख्या

पूर्व-रीति

रीति

कृपाराम

(हित-तरंगिनी से)

अङ्ग-अङ्ग जोबन छयौ, नवल-बधू के आज।
लघु सिसुता ज्यो देखिए, भोर-तरैयन साज ॥

खिझवति हँसति लजाति पुनि, चितवति चमकति हाल।
सिसुता-जोबन की ललक, भरे वधू तन ख्याल ॥

नवल बधू तन तरुनई, नई रही है छाइ।
दै चसमा चख चतुरई, लघु सिसुता लख जाइ ॥

ऐसो हाँस न कीजिये, जातै रूसै हाल।
नवल बधू की ना मिटी, अजहूँ हिलकी लाल ॥

अति प्रवीन वह सुन्दरी, मोहन को हित आँकि।
सबकी दीठि बचाइ कै, गई झरोखनि झाँकि ॥

नाइन पै नाहिन बन्यो, देत महावर पाइ।
निरख बधू की रुख सखी, हुलसि दियो जदुराइ ॥

मोहि रुचै सोई करै, अति उदार प्यो जानि।
मो मनसा घर है सदा, करौ कौन विधि मान ॥

खेलति चोर-मिहीचनी, निजु सखि डीठि बचाइ।
स्याम दुरे तिहि कोन में, दुरत लए उर लाइ ॥

छिन रोवै छिन में हँसै, छिन में बहू वतराइ।
गहै मौन छिन मे बधू, छिन दृगजल उफनाइ ॥

गए रूसि जदुपति सखी, निरखि उदधि सों मान।
बड़वानल ते विषम उर, उपजो विरह कृशान ॥

इन्द्र-धनुष सी पति अधरन की शोभा ।
निरखि बधू-मन उपजो पूरन क्षोभा ॥

पति आयो परदेश तै, पर रितु बसंत की मानि ।
झमकि झमकि निजु महल में, टहले करे सु रानि ॥

आये मोहन गाँव ते, सुनि हुलसी उर नारि ।
फरके उरज कपोल दृग, तरकत तनी निहारि ॥

लोचन चपल कटाक्ष-सर, अनियारे विष पूरि ।
मन-मृग बेधे मुनिन के, जगजन सहित बिसूरि ॥

गंग

जल में दुरी है, जैसे कमल की कलिका द्वै ,
उरजन ऐसे दीन्ही सरुचि दिखाई सी ।
गंग कवि साँझ सी सोहाई तरुनाई आई ,
लरिकाई माँझ कछु मैं न लखि पाई सी ।।
स्याम की सलौनौ तन, तामे दिन द्वैक माँझ ,
फिरी ही चहत मनमथ की दुहाई सी ।
सीसी में सलिल जैसे, सुमन पराग तैसे ,
सिसुता मे झलकति जोबन की झाँई सी ।।

मृगहू ते सरस विराजत बिसाल दृग ,
देखिए न अति दुति कौलहु के दल मै ।
गग घन दुज से लसत तन आभूषन ,
ठाढे द्रुम छाँह देख कै गई विकल मैं ।।
चख चित चाय भरे शोभा के समुद्र माँझ ,
रही ना सँभार दशा औरे भई पल मैं ।
मन मेरो गरुओ गयो री बूड़ि मैं न पायो ,
नैन मेरे हरुये तिरन रूप-जल मै ।।

बाँकी मोहैं सोहै बाँकी चितवन मन मोहै ,
वाको मोती बेसर अधर पर करको ।
कहै कवि गग तेरे उचकि उचकि कुच ,
गति न रहत निरखत भरा भर को ।।
आनन की उपमा तै सकल विकल भई ,
भली सोभा लै रह्यो तिल कपोल पर को ।
पंकज के बीच आली अलि गो समाइ तहाँ ,
मानो री विछरि छोना बैठ्यो मधुकर को ।।

गयंद की चुराई चाल मैंदही को लक चोर्‌यो
मुख तेरे चंद चोर्‌यो नासा चोरी कीर की ।
म्रिगनि के नैन चोर्‌यो पिकनि के बैन चोर्‌यो,
औठ तेरे लाल चोर्‌यो दंत छवि हीर की ॥
कहे कवि गग वैनी नाग तै चुराई लाई,
भौह तो कमान पल अर्जुन के तीर की ।
जेते तुम लूटे ते पुकारत कन्हैया जू पै,
एतनि की चोरी कहा छपेगी अहीर की ॥

अग ओप आँगी भीजी अन्त अनुराग भीजे,
अधर तमोर भीजे विद्रम से झलकै ।
गति भीजी आलस सहज सोहै मोहै भीजी,
लाज भीजी चितवनि प्रेम भीजी पलकैं ॥
आवौ लाल दौरि दुरि देखै मेरी पीठ पीछे,
जाके देखिबे को निसि द्यौस लेत ललकैं ।
बचन पियूष भीजे बुधि के विलास गग,
रस भीजी आपुन फुलेल भीजी अलकैं ॥

मोर को मुकुट मुक्तानि के वे अवतंस,
रोम-रोम रूप मानो मनमथ मई है ।
काछिनी रुचिर रुचि सोहै पीतपट सुचि,
चटकीली अङ्ग अङ्ग पीत छबि छई है ॥
कहै कवि गंग वनी बानिक विविध भाँति,
आभा तीनों लोक की सुएक ठौर भई है ।
मनि मनमोहन के कंठ में यों झलकति,
जानिये जुन्हैया जमुना में फैलि गई है ॥

स्री नन्दलाल गोपाल के कारन,
कीन्हों सिंगार सु राधे बनाई ।
कुंकुम आड़ सुकंचन देह,
दिये मुकताहल की झलकाई ॥

सीस ते एक छुटी लट सुन्दर,
आनि के यों कुच पै लपटाई।
गंग कहै मानो चद के बीच ह्वे,
सभु को पूजनि नागिनि आई॥

मृगनैनी की पीठ पै वैनी लसै,
सुख साज सनेह समोइ रही॥
सुचि चीकनी चारु चुभी चित में,
भरि भौन भरी खुशबोइ रही।
कवि गग जू या उपमा जो कियो,
लखि सूरति ता श्रुति गाइ रही।
मनो कंचन के कदली-दल पै,
अति साँवरी साँपिनि सोइ रही॥

चाल न जानत चचलता,
चूनरी चहूँ खूब वनी अति राती।
चंदन खौर चुनाव की वेंदी,
नवेली तिया सब संग सगाती॥
सेज को नाम लिए सकुचे,
कविगंग कहै न कही छवि जाती।
सोने से गात सलोने से नैन,
अनूठे से ओठ अछूती सी छाती॥

लाल गई ललना कहँ लेन ही,
ताहि बिलोक रही गहि मौन सो।
वा मुख की दुति नील दकूल मे,
चाहत चंद उदो मनु हौन सो॥
गंग कहै लखि रीझिहो लाल,
जगैमग जोति सबै तन सोन सो।
प्यारी के रूप के पानिप में,
मन माइल मेरो विलाइ गो लोन सो॥

मन घायल पायल मायल ह्वै,
गढ़ लंक ते दूरि निसँक गयो।
तहँ रूप-नदी त्रिबली तरि कै,
करि साहस सागर पार भयो॥
कवि गग भनै बटपार मनोज,
रुमावलि सों ठग संग लयो।
परि दोऊ सुमेरु के बीच मनोभव,
मेरो मुसाफिर लूट लयो॥

जो चितऊँ तो रहे चित में,
चुभि याही ते भूलि न दीठ उठाऊँ।
गुपाल परोस बसै बस माई हो,
को लगि आँचर आँखि दुराऊँ॥
गग कहै हरि को मुख चंद,
विलोकत हो भरि आनन्द पाऊँ।
देखि सखी बड़वानल लाज ते,
प्रेम-समुद्र न बाढ़न पाऊँ॥

जा दिन ते हेर्‌यो मनमोहन है आली सुनि,
ता दिन ते देहबिन दूनो ह्वै दगतु है।
कहै कवि गंग नित चित चटपटी होति,
पावस नदी की न्याइ नेहु उमगतु है॥
रूप की मरोरै मारै मारु के मरूरे मेरे,
मुरि मुसकानि पर मैनु सो जगतु है।
साँवरेऊ मानस निगोरे नीके लागत कि,
गोरी ही की आँखिनि को लुहरु लगतु है॥

जा दिन तें माधो मधुबन को सिधारे सखी,
ता दिन ते द्रिगनि दवागनि सी दै गयो।
कहि कवि गंग अब सब ब्रजवासिनु की,
सोभा औ सिगार सुख सग लाइ लै गयो॥

आछे मन भावने वे विविधि बिछावने जे,
सकल सुहावने डरावने से ह्वै गयो।
फूले-फूले फूलनि में सेज के दुकूलनि में,
कालिंदी के कूलन बिसासी बिस बै गयो॥

धीर न धरति घरी देखे बिन जाति मरी,
ऐसी कछु करी दीयो घाइनि मे नौन है।
सुधि-बुधि टरी मानो खाइ ठग बरी जीभ,
खरी अरबरी न गहति क्यों हूँ मौन है॥
लाज परहरी खरी उघरी न डरी काहू,
कहै कवि गंग समुझहि सखी सो न है।
कौन टेव परी साठ्यो घरी कहै हरी,
पूछै सहचरी अरी हरी तेरो कौन है॥

हा हा नेकु आइ लेहू बूड़ै लेति तेरो नेहू,
केहू ह्वै दिखाई देहु डोरू ज्यों दगत है।
कहै कवि गंग कान्ह व्याकुल इतक मान,
काउ की कनाई कहाँ करेजे लगति है॥
कोइल अलग डार बोलत डहारी लागे,
डहडही जोन्ह जी मे डाह सी लगति है।
तुम बिनु सूनी राति कारी साँपु ह्वै है खाति,
राति सेज देखि देखि छाती उमगति है॥

बैठी है सखिन संग पियको गमन सुन्यो,
सुखके समूह में वियोग आग भरकी।
गंग कहै त्रिविध सुगंध लै बह्यो समीर,
लागत ही ताके तन भई व्यथा ज्वर की॥
प्यारी को परसि पौन गयौ मानसर पै सु,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे औ सेवार जरि छार भई,
जल जरि गयो पंक सूक्यौ भूमि दरकी॥

सेत सरीर हिये विष स्याम,
कला फन री मन जान जुन्हाई।
जीभ मरीचि दसौ दिसि फैलति,
काटत जाहि बियोगिन ताई॥
सीस ते पूछ लौ गात गर्‌यो, पै
डसे बिन ताहि परै न रहाई।
सेस के गोतके ऐसे हि होत है,
चन्द नहीं या फनिन्द है माई॥

चकई बिछुरि मिली तू न मिली प्रीतम सों,
गग कवि कहै एतो किया मान ठान री।
अथये नछत्र ससि अथई न तेरी रिस,
तू न परसन परसन भयो भान री॥
तू न खोलो मुख खोलो कंज औ गुलाब मुख,
चली सोरी वायु तू न चली, भो बिहान री।
राति सब घटी नाही करनी ना घटी तेरी,
दीपक मलीन न मलीन तेरो मान री॥

अधर मधुप जैसे वदन अधिकानी छवि,
विधि मानो बिधु कीन्हो रूप को उदधि कै।
कान्ह देखि आवत अचानक मुरछि पर्‌यो,
बदन छपाइ सखियान लीन्ही मधि कै।
मारि गई गंग दृग-शर बेधि गिरिधर,
आधी चितवनि मैं अधीन कीन्हों अधिकै।
बान बधि बधिक बधे को खोज लेत फेरि,
बधिक-बधू ना खोज लीन्ही फेरि बधि कै।

रीति

केशवदास

केशोदास लाख लाख भाँतिन के अभिलाष ,
बारि देरी बावरी न बारि हिए होरी सी ।
राधा हरि केरी प्रीति सब ते अधिक जानि ,
रति रतिनाह हू में देखो रति थोरी सी ।
तिन हूँ में भेद न भवानि हूँ पै पार्यो जाइ ,
भारती की भारती है कहिबे को भोरी-सी ।
एकै गति एक मति एकै प्राण एकै मन ,
देखिबे को देह द्वै है नैनन की जोरी सी ॥

जो हों कहूँ रहिये तो प्रभुता प्रकट होत ,
चलन कहौ तो हित हानि नाहीं सहनो ।
भावै सो करहु तो उदास भाव प्राणनाथ ,
साथ लै चलहु कैसे लोकलाज बहनो ।
केशौराय की सौं तुम सुनहु छबीले लाल ,
चलै ही बनत जो पै नाही आजु रहनो ।
तैसिये सिखावो सीख तुमहीं सुजान पिय ,
तुमही चलत मोहि जैसो कछू कहनो ॥

पूरण कपूर पान खाये कै सी मुखबास ,
अधर अरुण रुचि सुधासौं सुधारे है ।
चित्रित कपोल लोल लोचन मुकुर मैन ,
अमर झलक झलकनि मोहि मारे है ।
भृकुटी कुटिल जैसी तैसी न किये हू होहि ,
आँजी ऐसी आँखे केशौराय हेरि हारे है ।
काहे को शृँगारि कै बिगारति है मेरी आली ,
तेरे अङ्ग सहज शृँगार ही शृँगारे हैं ॥

भूषण सकल धनसार ही के घनश्याम,
कुसुम कलित केसरहि छवि छाई सी।
मोतिन की लरी शिर, कंठ कठमाल हार,
और रूप-ज्योति जात हेरत हेराई सी।
चदन चढ़ाये चारु सुन्दर शरीर सब,
राखी शुभ शोभा सब बसन बसाई सी।
शारदा सी देखियतु देखौ जाइ केशौराय,
ठाढी वह कुँवरि जुन्हाई मैं अन्हाई सी।

शिशुता-सहित भई मदगति लोचननि,
गुणनि सो बलित ललित गति पाई है।
भौहनि की होडाहोड ह्वै गई कुटिल अति,
तेरी बानी मेरी रानी सुनत सुहाई है।
केशौदास मुखहास ही सिखै ही, कटि-तटि--
छिन-छिन सूछम छबीली छवि छाई है।
बार बुद्धि बालनि के साथ ही बढी है बीर,
कुचन के साथ ही सकुच उर आई है॥

कोमल अमलता की रंगभूमि कैधौ यह,
शोभियत आँगन के शोभा के सदन को।
अरुण दलनि पर कीनौ कै तरणि कोप,
जीत्यो किधौ रजोगुन राजिव के गन को।
पल पल प्रणय करत किधौ केशौदास,
लागि रह्यो पूरवानुराग पिय मन को॥
ए री वृषभानु की कुमारी तेरे पाँय सोहै,
जावक को रंग कै सुहाग सौतिजन को॥

कोमल अमल चल चीकने चिकुर चारु,
चितये ते चित चकचौधियत केशौदास।
सुनहु छबीली राधा छूटैं ते छ्वैं छवानि,
कारे सटकारे है सुभाव ही सदा सुवास॥

सुनिकै प्रकास उपहास निशि-वासर कौ,
कीनौ है सुकेशव सुवास जाय कै अकास।
यद्यपि अनेक चन्द्र साथ मोर-पक्ष तऊ,
जीत्यौ एक चद्र-मुख रूप तेरे केशपास॥

तन आपने भाये शृंगार नहीं,
ये शृँगार शृँगार शृँगारै वृथा हीं।
व्रज-भूषण नेननि भूख है जाकी
सु तो पै शृंगार उतारे न जाही॥
सब होत सुगंध नही तो सुगध,
सुगंध मे जाति सु गंध वृथा हीं।
सखि तोहि तै हैं सब भूषण भूषित,
भूषण तौ तुव भूषित नाही॥

लोचन बीच चुभी रुचि राधे की,
केशव कैसे हूँ जाति न काढ़ी।
मानहु मेरे गही अनुरागिनि,
कुंकुम-पंक अलंकित गाढ़ी॥
मेरी यो लागि रही तनुता जनु,
यो द्युति नील निचोल की बाढी।
मेरे ही मानौ हिये कहँ सूँघति
यों अरबिन्द दिये मुख ठाढ़ी॥

नील निचोल दुराइ कपोल,
विलोकति ही किये ओलिक तोही।
जानि परी हँसि बोलति, भीतर
भाजि गई अवलोकति मोही॥
बूझिबे की जक लागी है कान्हहि,
केशव कै रुचि रूप लिलोही।
गोरस की सों बबा की सों तोहि,
किबार लगी कहि मेरी सो कोही॥

मोहन मरीचिका सो हास घनसार कैसो,
बास मुख रूप कैसी रेखा अवदात हैं।
केशोदास बेणी तौ त्रिवेणी सी बनाइ गुही,
जामैं मेरे मनोरथ मुनि से अन्हात हैं॥
नेह उरझे से नैन देखिबे को विरुझे से।
विझुकी सी भौंहें उझके से उरजात है।
देवी सी बनाई बिधि कौन की है जाई यह,
तेरे घर जाई आजु कही कैसी बात हैं॥

मत्त गयंदन साथ सदा इहि,
थावर जंगम जंतु विदार्यो।
ता दिन ते कहि केशव बेधन,
बन्धन कै बहुधा विधि मार्यो॥
सो अपराध सुधारन शोधि,
इहै इनि साधन साधु बिचार्यो।
पावक पुज तिहारे हिये यह
चाहत है अब हार विहार्यो॥

काछे सितासित काछनी केशव,
पातुर ज्यो पुतरीन बिचारो।
कोटि कटाक्ष नचै गति भेद,
नचावत नायक नेह निहारो॥
वाजत है मृदु हास मृदंग सो,
दीपति दीपनि को उजियारो।
देखत हो हरि देखि तुम्हें यह
होतु है आँखिन बीच अखारो॥

दशन बसन माहिं दरसै दशन-द्युति,
बरपि मदन रस करत अचेत हौ।
छाँई झलकति लोल लोचन कपोलन में,
मोल लेत मनक्रम बचन समेत हौ॥

भौहैं कहे देत भाउ कहो मेरी भावती के,
भाव ते छबीले लाल मौन कौन हेत हौ।
केशव प्रकाश हास हँसि कहा लेहुगे जु,
ऐसे ही हँसे ते तौ हिये को हरि लेत हौ॥

ज्यों ज्यों हुलास सों केशवदास,
विलास निवास हिये अवरेख्यो।
त्यौ त्यौ बढ्यो उर-कप कछू,
भ्रम भीत भयो किधौ शीत विसेख्यो॥
मुद्रित होत सखी वरही मेरे
नैन सरोजनि साँच कै लेख्यो।
तैं जु कह्यो मुख मोहन को
अरबिंद सो है सो तो चंद सो देख्यो॥

बैठी सखीन की शोभै सभा,
सब ही के जु नैनन माँझ बसै।
बूझै ते बात बराइ कहै,
मन ही मन केशवदास हँसै॥
खेलति है इत खेल उतै पिय,
चित्त खिलावत यों बिलसै।
कोउ जानै नहीं दृग दौरे कबै,
कित ह्वै हरि आनन छ्वै निकसै॥

पहिले तजि आरस आरसि देखि,
घरीक घसै घनसार हिलै।
पुनि पौंछि गुलाब तिलाँछि फुलेल,
अँगोछे मैं आछे अँगौछन कै॥
कहि केशव मेदजवाद सौ माँजि,
इते पर आँजे मैं अंजन दै।
बहुरे दुरि देखौ तो देखौ कहा—
सखि लाज तो लोचन लागे रहै॥

सौंहै दिवाय दिवाय सखी इक
बारक कानन आनि बसाये।
जानै को केशव कानन ते कित ह्वै,
हरि नैननि माँझ सिधाये॥
लाज के साज धरेई रहे,
तब, नैनन लै मन ही सौ मिलाये।
कैसी करौ अब क्यो निकसै री,
हरेई हरे हिय में हरि आये॥

रीझि रिझाइ झरोखनि झाँकि
रही मुख देखि दिखाइ सुभाहीं।
बोलन आये अबोल भई,
अब केशव ऐसी हमैं न सुहाही॥
मै हुतै बहराई है तोसी गी,
तू बहरावत मोहि वृथाही।
याही सयान सदा बलि हौ,
हरि सों हँसि हाँ करै मोहि सों नाहीं॥

जानै को पान खवावत क्यों हूँ,
गई लगि अंगुली ओठ नबीने।
तैं चितयौ तबही तिहिं भाँति जु,
लाल के लोचन लीलि से लीने।
बात कही हरये हँसि कै सुनि,
मै समुझी वै महारस भीने।
जानति हौ पिय के जिय के,
अभिलाष सबै परिपूरण कीने।

दीनो मैं पाँइ झँवाइ महावर,
आँजो मै आँजन आँख सुहाई।
भूषण भूषित कीने मै केशव,
माल मनोहर हू पहिराई।

कौ लौं पीहौ कान-रस रूप की बूझै है प्यास,
केशोदास कैसे नयनन भरि पीजिये।
वीर की सौं मेरी वीर वारी है जुवारी आन,
नेक हँसि हाँ कर बलाइ तेरी लीजिए।
बरसक माँझ यह बैस अलबेली वीते,
देहो सुख सखिन क्यों अब ही न दीजिये।
ये री लडबावरी अहीर ऐसी बूझों तोहि,
नाही सो सनेह कीजै नाह सों न कीजिये॥

नाह लगे मुख सौति दहै दुख,
नाहीं लगे दुख देह दहैगो।
नाहीं अबै सुख देत है केशव,
नाह सदा सुख देत रहैगो॥
नाही ते नाहि री नाहि भलाई,
भलो सब नाह हितै पै कहैगो।
नाह सो नेह निबाहि बलाइ ल्यौ,
नाहीं सों नेह कहा निबहैगो।

सिखै हारी सखी डरपाइ हारी कादंविनी,
दामिनी दिखाइ हारी दिशि अधिरात की।
झुकि-झुकि हारी रति, मारि मारि हार्‌यो मार,
हारी झकझोरति त्रिविध गति बात की।
दई निरदई वाहि ऐसी काहि मति दई।
जारत जु रैन ऐन दाह ऐसी गात की।
कैसे हूँ न माने ही मनाइ हारी केशोदास,
बोलि हारी कोकिल, बुलाइ हारा चातकी॥

छविसो छवीली वृषभानु की कुँवरि आज,
रहीं हुती रूप-मद मान-मद छकि कै।
मारहू तै सुकुमार नन्द के कुमार ताहि,
आये री मनावन सयान सब तकि कै॥

हँसि हँसि सौंह करि-करि पाँय परि-परि,
केशोराय की सों जब रहे पिय जकि कै।
ताही समै उठे घन घोर-घोर, दामिनी-सी
लागी लौटि श्याम-घन-उर सों लपकि कै॥

मेघन ज्यों हँसि हंसन हेरत,
हंसन ज्यों घन रूपन पीवै।
कंजन ज्यों चित चन्द न चाहत,
चन्द ज्यों कजनि क्यों हू न छीबै॥
ताल तै बागनि बाग तै तालनि,
ताल तमाल की जातनि सीवैं।
कैसी है केशव वे युवतीं सुनि,
ऐसी दशा पिय की पल जीवै॥

मैं पठई मति लेन सखी सु
रही मिलि को मिलिबे कहँ आने।
जाय पिले दिन ही दृगदूत,
दयाल सो देह दशा न बखाने॥
प्रेरत पैज किये तन प्राणनि,
योग के और प्रयोग निधाने।
लाज ते बोल न पाऊँ न केशव,
ऐसे ही कोऊ कहा दुख जाने॥

आये ते आबैगी आखिन आगे ही,
डोलि है मानहु मोल लई है।
सोवै न सोवन देय न यो,
तब सौं इनमें उन साख दई है।
मेरिये भूल कहा कहौं केशव,
सौति कहूँ ते सहेली भई है,
स्वारथ ही हितु है सबके,
परदेश गये हरि नीद गई है॥

केशव कैसे हूँ कोरि उपायनि,
आन सुतो उर लागति है।
चकचौधति सी चितवै चितमे,
चित सोवत हूँ महँ जागत है॥
परदेश प्रिया पल सोहिं पत्याति,
न जाने को याकी कहा गति है।
तजि नैनन नीद नवोढ़ा वधू,
लहुँ आधिक रात ते भागति है॥

भौरिनि ज्यौ भावत रहत बन बीथिकान,
हसिनि ज्यो मृदुल मृणालिका चहति है।
पिउ-पिउ रटत रहत चित चातकी ज्यौ,
चन्द चितै चकई ज्यों चुप ह्वै रहति है।
हरनी ज्यो हेरति न केशरि के कानन को,
केका सुनि व्याली ज्यों बिलान ही कहति है।
केशव कुँवर कान्ह बिरह तिहारे ऐसी,
सुरति न राधिका की मूरति गहति है॥

दीरघ दरीन वसे केशवदास केशरी ज्यों,
केशरी को देखे वनकरी ज्यों कँपत है।
वासर की सपदा चकोर ज्यौ न चितवत,
चकवा ज्यौ चंद ही ते चौगुनी चँपत है॥
केका सुनि ब्याल ज्यो विलात जात घनस्याम,
घननि की घोरनि जवासे त्यौ तपत है।
भौर ज्यो भँवत बन योगी ज्यो जगत निशि,
चातक ज्यो श्याम नाम तेरोई जपत है॥

जही जही दुरै तहीं जौन्ह ऐसी जग-मगै,
कैसे हूँ जु केशव दुराइ ल्याउ रग की।
पवन को पथ अलि अलिन के पीछे अली,
अलिनि ज्यो लागी रहें जिन्हे साथ सग की।

निपट अमिल वह तुम्हें मिलिवे की जक,
कैसे कै मिलाऊँ गति मो पैं न विहङ्ग की।
इक तो दुसह दुख देति हुती, दुति हूँ ते
बीस बिसे बिस बास भई वाके अङ्ग की॥

शीतल समीर टारु चद्र-चंद्रिका निवारु,
ऐसे ही तौ केशोदास हरष हेरातु है।
फूलनि फैलाइ डारु झारि डारु घनसारु,
चदन को ढारु चित चौगुनो पिरातु है।
नीरहीन मीन मुरझाइ जीवै नीर ही ते,
छीरते छिरीके कहा धीरज धिरातु है।
पाई है तै पीर किधौ यों ही उपचारु करै,
आगिही को डाढो अग आगि ही सिरातु है॥

खेलत न खेल कछु हाँसी न हँसत हरि,
सुनत न कान गान तान बान-सी बहै।
ओढ़त न अम्बरनि डोलत दिगम्बर से,
शम्बर-ज्यों शम्बरारि दुःख देह को कहै।
भूलिहू न सूँघै फूल फूलि-फूलि कुँभिलात
जात, खात बीराहू न बात काहू सों कहैं।
देखि-देखि मुखचन्द केशव चकोर सम
चन्द्रमुखी चद्र हू के बिंब-त्यों चितै रहैं॥

फूल न दिखाउ, शूल फूलत है हरि बिनु,
दूरि करि माल बाल ब्याल सी लगति है।
चँवर चलाउ जिन बीजन हलाउ मति
केशव सुगंध-वायु बाइ री लगति है।
चंदन चढाउ जिन ताप सी चढाति तन
कुंकुम न लाउ अंग आगसी लगति है।
बार बार बरजति बाबरी है बारी आन
बिरी न खवाउ बीर बिष-सी लगति है॥

चपला न चमकति चमक हथ्यारन की
बोलत न मोर बंदी सयन समाज के।
जहाँ तहाँ गाजत न बाजत दमामे दीह
देत न दिखाई दिन-मणि लीने लाज के ॥
चलि चलि चंद्रमुखी सामरे सखा पै बेगि
शोषक जु केशोदास अरि सुख साज कै ॥
चढ़ि-चढ़ि पवन-तुरंगन गगन घन
चाहत फिरत चंद योधा यमराज के ॥

अँखियानि मिली सखियाँनि मिली,
पतियान मिली बतियाँ तजि भौने।
ध्यान विधान मिली मनहीं मन
ज्यो मिलै एक मनो मिल सौने।
केशव कैसेहुँ बेगि मिलौ ननु
ह्वै है वहै हरि जौ कछु हौने।
पूरण प्रेम समाधि मिलैं
मिलि जैहै तुम्है मिलि हौ तब कौने ॥

आजु मिले वृषभानु-कुमारिहि
नन्द कुमार वियोग बितै कै।
रूप की राशि रस्यो रस केशव,
हास विलासनि रोस रितै कै।
बागे के भीतर देखि हिये नख,
नैनन वाइ रही सु इतै कै।
फूलहि मे भ्रम भूलि मनो
सकुचे सरसीरुह चद चितै कै।

बूझत ही वह गोपी गुपालहि,
आजु कछू हँसि कै गुण गाथहिं।
ऐसे में काहू को नाम सखी कहि
कैसे धौ आइ गयो ब्रजनाथहिं।

खाति खवावति ही जु बिरी,
सु रही मुख की मुख हाथ की हाथहिं ।
आतुर ह्वै उन आँखिन तें अँसुवा,
निकसे अखरानि के साथहिं ॥

सौंह को सोच न सकोच काहू बीच की को,
पोंछो प्यारे पीक-लीक लोचन किनारे की ।
माखन की चोरी की है थोरी थोरी मो हूँ सुधि,
जानत कहा किशोरी भोरी है जु बारे की ।
मेरी ये कुमति और कहा कहौ केशोदास,
लागत न लाल लाज इहाँ पग धारे की ।
एती है झुठाई वाहि अब ही रुठाई,
यह छार हू तौ छूटी नहीं पाँइन के पारे की ॥

घेरो जनि मोहिं घर जान देहु घनश्याम,
घरिक में लागी उर देखिबी ज्यों दामिनी ।
होइ कोऊ ऐसी-वैसी आवे इत-उत ह्वै कै,
वे ऊ वृषभानु जू की बेटी गज-गामिनी ।
आदित को आयो अन्त आवो बनि बलि जाउँ,
आवत है वे ऊ बनि आई अरु यामिनी ।
काम के डरन तुम कुंज गह्यो केशोदास,
भौंरन के भवन भवन गह्यो भामिनी ॥

सुन्दर

मानों भुजंगिन कज चढी
मुख ऊपर आय रहीं अलकै त्यों,
कारी महा सटकारी है सुन्दर,
भींजि रही मिल सौधन ही सौ।
लटकी लट वा लटकीली ते और
गई बढ़िकै छवि आनन की यौ
आँक बढ़ै दिये दूजी बिकारी के
होत रुपैयनु तै मुहरैं ज्यों॥

देखति नैन की कोरन लो
अधरानि ही मे मुसक्यानि कौ थानो।
बोलति बोल सो कठ ही में,
चलते पग पै न कहूँ अहरानौ॥
सुन्दर रोष नहीं सपने,
अरु जो भयौ तौ मन ही में विलानौ।
है बसुधाए सुधाई सबै,
पर याकी सुधाई सुधाई है मानो॥

कहूँ वनमाल कहूँ गुँजनिकी साल कहूँ,
सग-सखा ग्वाल ऐसे हाल भूलि गये है,
कहूँ मोरचन्द्रिका लकुट कहूँ पीत-पट,
मुरली-मुकुट कहूँ डारि दये है।
कुँडल अडोल कहूँ सुन्दर न बोले वोल,
लोचन अलोल मानौ काहू हर लये हैं।
घूँघट की ओट ह्वै के चितयो कि चोट करी,
लालन तो लोट-पोट तब ही तै भये है॥

सकुची न सखीन सों, सौतिन सों ,
सपने हू न सासु की कान कहूँ ।
कुनवान की तीयन सों किहूँ भाँति ,
डराए ते हौ न डरी कबहूँ ॥
कहि सुन्दर नन्दकुमार लिए ,
तन कौ तनकौ नहि चैन कहूँ ।
हरि के हित में तौ करी इतनी ,
हरि कीन्ही जु आए नही अजहूँ ॥

प्रीतम गौनु किधौ जियगौनु कि
भौनु कि भारु भयानक भारो ,
पावस पावक फूल कि सूल
पुरन्दरचाप कि सुन्दर आरो ।
सीरी बयारि किधौं तरवारि है
वारिदवारि कि बान बिषारो ,
चातक बोल कि चोट चुभै चित ,
इन्द्रबधू कि चकोर को चारो ॥

भोर भये मथुरा को चलेंगे
यो बात चली हरि नन्द-ललाकी ,
बोल सकी न सकोचनि ते ,
पीरी भई मुखजोति तिया की ।
सुनि हाथ टिकाइ ललाट सौ बैठी
इहै उपमा कवि सुन्दरता की ,
देखै मनो तिय आयुके आखर
और कछू है रहे बच बाकी ॥

सोरा सौ सँवारिके गुलाब माँहि ओरा डारि ,
सीतल बयारि हूँ सौ बार बार वरिये ,
चैन न परत छिनु चम्पक तै चन्दन तैं ,
चन्द्रमा ते चाँदनी तैं चौगुनी कै जरिये ।

सुन्दर उसीर चीर ऊजरै तैं दूनी पीर,
कमल कपूर कोरि एक ठौर करिये,
एतै मानि विरहागि उठी तन माँझ लागि,
सोई होति आगि जाई आगे लाइ धरिये ॥

ऊधोजू सँदेसो नाहिं कहियो जाइ कहा कहै,
जैसी करी कान्ह तैसी कोऊ न करतु है,
जीभ तो हमारे एक कहाँ लगि कही परै,
जी मे जिती कहौ तिती क्योंहू ना सरतु है।
द्वारका बसतु हरि सुन्दर समुद्र ही मे,
इहौ परवाह जाइ सिन्धु मे परतु है,
जानि है वे जमुना के जल ही तै जाकी ज्वाल,
जलधि मे पर्यो वड़वानल जरतु है॥

काके गए वसन पलटि आए वसन,
सु मेरो कछु वस न रसन उर लागे हौ।
भौहै निरछौहै कवि सुन्दर सुजान सोहै,
कछू अलसौहै गौहै जाके रस-पागे हौ।
परसौ मैं पाँय हुते परसौ मै पाय गहि
परसौ वे पाय निसि जाके अनुरागे हौ।
कौन वनिता के हौ जू कौन वनिता के हौ सु,
कौन बनिता के बनि, ताके सग जागे हौ ?

—:o:—

मुबारक

(अलक-शतक—तिल-शतक)

अलक छुटी लपटी वदन देखो दुति दृग दौरि ।
चढ़ी भाग तै भाल तिय मनु सिंगार की बौरि ॥

तिय नहात जल अलक तै छुअत नयन की कोर ।
मनु खंजन-मुख देत अहि अम्मृत पौंछि निचोर ॥

तिल कपोल पर अलक झुकि झलकत ओप अपार ।
मनो मयन के बीच तै उपजी लता सिगार ॥

अरुन चीर के घूँघटे झलके अलक सुढार ।
मनु सोहाग-सर मै परे रुचि-सेवार-शृङ्गार ॥

घूँघट प्रीति दुकूल के झलकत अलक सोहाय ।
मनु अनुराग समुद्र मैं विसहरि बिरह नहाय ॥

तिल तरुनी के चिवुक मे सो आरसी अनूप ।
मन मुख देखे आपनो सूझै काम अनूप ।

तन कचन हीरा हँसनि विद्रुम अधर बनाय ।
तिल मनि स्याम जड़े तहाँ विधि-जरिया उजराय ॥

बेनी तिरवेनी बनी तहँ मन माघ नहाय ।
इक तिल के आहार तै सब दिन रैन बिहाय ॥

हास सतो गुण रज अधर तिल तम दुति चितरूप ।
मेरे दृग जोगी भये लये समाधि अनूप ॥

मोहन काजर काम को काम दियो तिल तोहि ।
जब जब अँखियन में परैं मोहि लेत मन मोहि ॥

(स्फुट)

कनक-वरन वाल नगन लसत भाल ,
मोतिन के माल उर सोहै भली भाँति है ।
चन्दमै चढ़ाई चारु चदमुखी मोहिनी-सी ,
प्रात ही अन्हाइ पगु धारे मुसकाति है ॥
चुनरी विचित्र स्याम सजि के मुवारक जू ,
ढाँकि नख-सिख ते निपट सकुचाति है ।
चन्द्रमै लपेटि के समेटि के नखत मानो ,
दिन को प्रणाम किये रात चली जाति है ॥

कान्ह की वाँकी चितौनि चुभी
झुकि कालिह ही झाँकी है ग्वालि गवाछनि ।
देखी है नोखी-सो चोखी-सी कोरनि,
ओछे फिरे उभरै चित जा छनि ।
मार्‌यो सँभार हिये मै मुवारक ,
ये सहजै कजरारे मृगाछनि ॥
सीक ले काजर दै री गँवारिन ,
आँगुरी तेरी कटेगी कटाछनि ॥

हमको तुम एक, अनेक तुम्है ,
उनहीं के विवेक वनाइ वहौ ।
इत चाह तिहारी विहारी ,
उतै सरसाइ के नेह सदा निबहौ ।
अव कीवौ मुवारक सोई करौ ,
अनुराग-लता जिन बोइ दहौ ।
घनस्याम ! सुखी रहौ आनद सौ
तुम नीके रहौ, उनही के रहौ ॥

किंसुक झार कुसुंभित डारि दै,
झार बयारि बहै जो गँवारन।
आग लगी है कहूँ बिन काज,
न मै हूँ सुनी समुझी रितु-रागन।।
तेरी सौं तोहि डरौ मैं मुबारक,
सीरी करौ सखी पै जलधारन।
च्वै चलि है चुरियाँ चलि आउ री,
आँगुरियाॅ जनि लाउ अँगारन।।

गूँजेगे भौर पराग-भरे बन,
बोलेगे चातक औ पिक गाइ कैं।
फूलेंगे टेसू कुसुंभ जहाँ लगि,
दौरैगौ काम कमान चढ़ाइ कैं।।
पौन बहैगी सुगंध मुबारिक,
लागैगी ही में सलाक-सी आइ कै।
मेरौ मनायौ न मानैगी भामती,
ऐहै बसंत लै जैहै मनाइ कैं।।

अम्ब बसंत में बौरहिंगे अरु,
कामिनि चंदन चीर रँगैहैं।
डोलेंगे पौन सुगंध मुबारक,
कुंज-लता सों लता लपटैहैं।।
जोगी जती, तपसी औ सती,
इनकों बिरहानल आन सतैहैं।
ताहि छिना सखि! प्रान तजौ,
जो पै कंत बसत के तत न ऐहै।।

आयौ बसंत अली! वन ते,
अलि के गन डोलत डक बगारन।
काम-ध्वजा किसलै उमगी,
बन कोकिल के गन लागे पुकारन।।

ऐसे में कैसे बचैगी मुबारक,
आज किए है सती वै सिंगारन।
दौरि पलास की डार चिता चढ़ि,
भूमि पड़े निरधूम अँगारन॥

आई सोहाई नई बरषा रितु,
रीझि हमारी कही पिय कीजिऐ।
जैसे ही रंग लसै चुनरी पिय,
तैसी ही पाग तुहूँ रंग लीजिऐ।
झूला पै झूलहिं एक ही संग,
मुबारक एतौ कह्यो पुनि कीजिऐ॥
जैसे लसै घनस्याम सो दामिनि,
तैसे तुम्हारे हिऐ लगि भीजिऐ॥

बाजत नगारे घन, ताल देत नदी नारे,
झींगुरन झाँझ, भेरी भृंगन बजाई है।
कोकिल अलाप चारी, नीलग्रीव नृत्यकारी,
पौन बीन-धारी चाटी चातक लगाई है॥
मनिमाल जुगनू, मुबारक तिमिर थार,
चौमुख चिराग चारु चपला जराई है।
बालम बिदेस, नए दुख कौ जनम भयौ,
पावस हमारे लायौ बिरह बधाई है॥

—:००:—

सेनापति

(कवित्त-रत्नाकर)

लाह सो लसति नग सोहत सिगार हार
छाया सोन जरद जुही की अति प्यारी है।
जाकी रमनीय रौस बाल है रसाल बनी
रूप माधुरी अनूप रंभाउ निवारी है।
जाति है सरस सेनापति बनमाली जाहि
सींचै घन रस-फूल-भरी मै निहारी है।
सोभा सब जोवन की निधि है मृदुलता की
राजै नव नारी मानौं मदन की बारी है॥

चाहत सकल जाहि रति कै भ्रमर है जो
पुजवति हौस उरबसी की बिसाल है।
भली विधि कीनी रस-भरी नव-जोवनी है
सेनापति प्यारे बनमाली की रसाल है।
धरति सुवास पूरे गुन कौ निबास अब
फूली सब अँग ऐसी कौन कलिकाल है।
ज्यौं न कुम्हिलाई कठ लाइ उर लाइ लीजे
लाई नव-बाल लाल मानौ फूल-माल है॥

केस रहै भारे मित्र-कर-सौ सुधारे तेरे
तोही माँझ पैयत मधुर अति रस है।
तपति बुझाइबे कौं हिय सियराइबे कौ
रम्भा तें सरस तेरे तन कौ परस है।
आज़ धाम-धाम पुरइन है कहायो नाम
जाके विहँसत मैलौ चन्द कौ दरस है।
सेनापति प्यारी तै ही भुवन की सोभा धारी
तू है पदमिनि तेरौ मुख तामरस है।

विरह हुतासन बरत उर ताके रहै
बाल मही पर परी भूख न गहति है।
सेवती कुसुम हू तै कोमल सकल अंग
सून सेज रत काम केलि कौं करति है।
प्रानपति हेत गेह अंग न सुधारै जाके
घरी है बरस तन में न सरसति है
देखौ चतुराई सेनापति कबिताई की जु
भोगिन की सरि कौ बियोगिनी लहति है॥

राधिका के उर बढ्यो कान्ह कों बिरह-ताप
कीने उपचार पै न होति सितलाइये।
गुरुजन देखि कहा सखिन सौ मन मे की
सेनापति करी है कचन चतुराइये।
माधव के बिछुरे तै पल न परति कल
परी है तपति अति मानौ मन ताइये।
सौह वृखभान की न रहै तो जरनि कछू
छाया घनस्याम की जो पूरे पुन्न पाइये॥

कुन्द से दसन धन, कुन्दन बरन तन
कुन्द सी उतारि धरी क्यौ बनै बिछुरि कै।
सोभा सुख-कन्द देख्यौ चाहियै बदन-चन्द
प्यारी जब मन्द मुसकाति नैक मुरि कै।
सेनापति कमल से फूलि रहे अंचल मैं,
रहैं दृग चचल दुराए हू न दुरि कै।
पलकै न लागै देखि ललकै तरुन-मन
झलकै कपोल, रही अलकै बिथुरि कै॥

चन्द दुति मन्द कीने, नलिन मलिन तै ही,
तो तै देव-अंगनाऊ रंभादिक तर है।
तोसी एक तुही, और तोसे तेरे प्रतिबिंब,
सेनापति ऐसे सब कबि कहत रहैं।

समुझै न वेई, मेरे जान यों कहत जेई,
प्रतिबिब वैह, तेरे भेष निरन्तर हैं।
यातैं मैं बिचारी प्यारी परै दरपन बीच,
तेरे प्रति बिंबौ पै न तेरी पटतर हैं॥

तेरौ मुख देखे चन्द देखौ न सुहाइ, अरु
चन्द के अछत जाको मन तरसत है।
ऐसे तेरे मुख सौ कहत सब कबि ऐसे,
देखौ मुख चन्द के समान दरसत है।
वे तौ समझै न कछू, सेनापति मेरे जान,
चन्द तैं मुखारबिंद तेरौ सरसत है।
हँसि हँसि मीठी मीठी बाते कहि कहि, ऐसे
तिरछे कटाच्छ कब चन्द बरसत है॥

छुट्यो ऐबौ जैबौ, पेम पाती कौं पठैबौ छूट्यो,
छूट्यो दूरि दूरि हू तैं देखिबौ दृगन तैं।
जेते मधियाती सब तिन सौं मिलाप छूट्यौ,
कहिबौ सँदेश हू कौं छुट्यौ सकुचन तैं।
एती सब बातैं सेनापति लोक-लाज काज
दुरजन त्रॉस छूटीं जतन-जतन तैं।
उर अरि रही, चित चुभि रही देखी एक
प्रीति की लगनि क्यौं हूँ छूटति न मन तैं

फूलन सौं बाल की बनाइ गुही वेनी लाल,
भाल दीनी वेंदी मृगमद की असित है।
अङ्ग अङ्ग भूपन वनाइ व्रज-भूपन जू,
वीरी निज कर कै खवाई अति हित है॥

जौतैं प्रानप्यारे परदेस कौ पधारे तौतैं
विरह तैं भई ऐसो ता तिय की गति है।
करि कर ऊपर कपोलहि कमल-नैनी
सेनापति अनमनी बैठियै रहति है।
कागहिं उड़ावै, कौहू कौहू करैं सगुनौती,
कौहू बैठि अवधि के वासर गनति है।
पढ़ि पढ़ि पाती कौहू फेरि कैं पढति, कौहू
प्रीतम कौ चित्र मे सरूप निरखति है॥

वाल, हरिलाल के वियोग तैं विहाल, रैनि
वासर बरावै बैठि वर की निसानी सौं।
वोल? कौन बल? कर-चरन चलावै कौन?
रहत है प्रान प्रानपति की कहानी सौं।
लागि रही सेज सौं अचेत ज्यौं, न जानी जाति,
सेनापति वरनत वनत न वानी सौं।
रही इकचक, मानौ चतुर चितेरे तिय
रचक लिखी है कोई कचन के पानी सौ॥

लोल है कलोल पारावार के अपार, तऊ
जमुना लहरि मेरे हिय को हरति है।
सेनापति नीकी पटवास हू तें ब्रज-रज,
पारिजात हू तैं वन-लता सरसति है।
अग सुकुमारी सग सोरह सहस रानी,
तऊ छिन एक पै न राधा विसरति है।
कंचन अटा पर जराऊ परजक, तऊ
कुंजन की सेजै वे करेजे खरकति है॥

कौनैं बिरमाए, कित छाए, अजहूँ न आए,
कैसे सुधि पाऊँ प्यारे मदन गुपाल की।
लोचन जुगल मेरे ता दिन सफल ह्वै है,
जा दिन बदन-छवि देखौं नँदलाल की।

सारँग धुनि सुनावै घन रस बरसावैं,
मोर मन हरषावै, लागै अति अभिराम है।
जीवन-अधार बड़ी गरज करन हार,
तपति-हरनहार देत मन काम है।
सीतल सुभग जाकी छाया जग, सेनापति,
पावत अधिक तन-मन बिसराम है।
संपै संग लीने सनमुख तेरे बरसाऊ,
आयौ घनस्याम सखि मानौ घनस्याम है॥

सूरै तजि भाजी, बात कातिक मौ जब सुनी,
हिम की हिमाचल तै चमू उतरति है।
आए अगहन, कीने गहन दहन हू कौ,
तित हू तै चली, कहूँ धीर न धरति है।
हिय मे परी है हूल दौरि गहि, तजी तूल,
अब निज मूल सेनापति सुमिरति है।
पूस में त्रिया के ऊँचे कुच-कनकाचल मे,
गढवै गरम भई, सीत सौ लरति है॥

सिसिर मे ससि कौ सरूप पावै सविताऊ,
घाम हू मै चाँदनी की दुति दमकति है।
सेनापति होत सीतलता (?) है सहस गुनी,
रजनी की झाँई बासर (?) मै झमकति है।
चाहत चकोर, सूर ओर दृग-छोर करि,
चकवा की छाती तजि धीर धसकति है।
चंद के भरम होत मोद है कमोदनी कौं,
ससि-अक पकजिनी फूलि न सकति है॥

सिसिर तुषार के बुखार से उखारत है,
पूस बीते होत सून हाथ-पाइ ठिरि कै।
द्योस की छुटाई की बड़ाई बरनी न जाइ,
सेनापति पाई कछू सोचि कै सुमरि कै।

सीत तै सहस-कर सहस-चरन ह्वै कै,
ऐसे जात भाजि तम आवत है घिरि कै।
जौ लौ कोक कोकी कौ मिलत तौ लौं होति राति,
कोक अधबीच ही तैं आवत है फिरि कै॥

अब आयौ माह प्यारे लागत है नाह, रवि
करत न दाह, जैसौ अवरेखियत है।
जानियै न जात, बात कहत बिलात दिन,
छिन सौ न तातै तनको बिरेखियत है।
कलप सी राति, सो तौ सोए न सिराति क्यौंहू
सोइ सोइ जागै पै न प्रीत पेखियत है।
सेनापति मेरे जान दिन हू तैं राति भई,
दिन मेरे जान सपने मै देखियत है॥

कब दिन दूलह के अरुन-बरन पाइ,
पाइहौ सुभग, जिनै पाइ पीर जाति है।
ऐसे मनोरथ, माह मास की रजनि, जिन
ध्यान सौ गवाँई, आन प्रीति न सुहाति है।
सेनापति ऐसी पदमिनी कौ दिखाइ नैक,
दूरि ही तैं दे कै, जात होत इहि भाँति है।
कछू मन फूली रही, कछू अनफूली, जैसे
तन मन फूलिबे की साध न बुझाति है।

परे तै तुसार, भयौ झार पतझार, रही
पीरी सब डार, सो वियोग सरसति है।
बोलत न पिक, सोइ मौन ह्वै रही है, आस—
पास निरजास, नैन नीर बरसति है।
सेनापति केली बिन, सुनरी सहेली! माह
मास न अकेली बन-बेली बिलसति है।
बिरह तैं छीन तन, भूषन-बिहीन दीन,
मानहुँ बसंत-कंत काज तरसति है॥

तव न सिधारीं साथ, मीडति है अब हाथ,
सेनापति जदुनाथ विना दुख ए सहैं।
चले मन-रंजन के, अजन कौ भूलि सुधि,
मंजन की कहा उनही के गूँदे केस हैं।
विछरे गुपाल, लागै फागुन कराल, तातैं
भई है बिहाल, अति मैले तन-भेस हैं।
फूल्यो है रसाल, सो तौ भयौ उर साल, सखी
डार न गुलाल, प्यारे लाल परदेस हैं।

नवल किशोरी भोरी केसरि तैं गोरी, छैल
होरी मैं रही है मद जोबन के छकि के।
चंपै कैसी ओज, अति उन्नत उरोज पीन,
जाकै बोझ खीन कटि जाति है लचकि कै।
लाल है चलायौ, ललचाई ललना कौ देखि,
उघरारो उर, उरवसी ओर तकि कै।
सेनापति सोभा कौ समूह कैसे कह्यो जात,
रह्यो है गुलाल अनुराग सौ झलकि कै।

सीता अरु राम, जुवा खेलत जनक-धाम,
सेनापति देखि नैन नैकहू न मटके।
रूप देखि देखि रानी, वारि फेरि पियै पानी,
प्रीति सौ बलाइ लेत कैयौ कर चटके।
पहुँची के हीरन में दम्पति की झाँई परी,
चन्द विवि मानो मध्य मुकुट निकट के।
भूलि गयो खेल, दोऊ देखत परसपर,
दुहुन के दृग प्रतिविवन सौं अटके॥

—:०:—

चिंतामणि त्रिपाठी

इक आजु मे कुंदन बेलि लखी,
मनिमंदिर की रुचि वृंद भरै।
कुरविंद के पल्लव इंदु तहाँ,
अरविंदन ते मकरंद झरै।
उत बुन्दन के मुकुतागन ह्वै,
फल सुन्दर ग्वै पर आनि परै।
लखि यौ दुति-कंद अनंद-कला,
नँदनंद सिलाद्रव रूप धरैं॥

राधा जू के अंग-संग रुचि त्यों रुधिर बासु
गुलाबन के रंग रुचि सौरभनि सौ भरी।
चितहि चुरावति सु कोकिल की बानी लगी
कानन चितौनि प्रेम-मदकी मनौ झिरी।
चिन्तामनि सो ही है रसाल मोरे कुंजनि मैं
अलिन के पुंजन सु मानौ मुनिआ चिरी॥
बातन के बीच तरुनाई आई सिसिर में
माघ सुदी पंचमी में ज्यौ बसंत की सिरी॥

कोकिल कूक सुने उमगे मनि
और सुभाव भयो अब ही का।
फूली लता द्रुम-कुंज सुहात
लगै अलि गुंजत भावत जी को॥
कारन कौन भयो जननी यहु,
खेल लगै गुड़ियान को फीको।
काहे ते साँवरो अंग छबीलो
लगै दिन द्वैक तै नैनानि नीको॥

बाँकी भई भृकुटी बिन कारन,
लोचन कानन आनि रहे है।
छाती कछु उचकी बिन ठौर,
बँकी चितवै इक भाउ लहें है।
पाँइ उठाइ धरै गरुए मनि,
बैन सकोच न जात कहे हैं।
मौनहि मौन विचार करै
मेरे अगनि कौन सुभाव गहे है॥

काहू को पूरब पुन्य लता सु तौ
वेलि अपूरब तू उलही है।
सोने सो जाको स्वरूप सवै
कर-पल्लव कांति कहा उमही है।
फूल हँसी फल है कुच जाहि के
हाथ लगै सुकृती सो सही है।
आली की यौ सुनकै बतिया,
मुसक्याइ तिया मुख नाइ रही है॥

केसरि बारहि वार उतारत,
केसरि अग लगावनि लागी।
आई है नैननि चचलता
दृग अंचल वाम छपावनि लागी।
दूलह के अवलोकन को
वा अटानि झरोखन आवनि लागी।
द्योस दो तीनक ते बतिया,
मन-भावन की मन भावन लागी।

कहुँ किंसुक-फूल-फलानि सों पूजत
शंभु, लखे वृषभान हरी।
मुसक्याति कछू मनि डीठि सखी की,
सुवाल - उरोजन बीच परी।

अँसुवान बिलोचन पूरि रही,
सु बिसूरति सी कछु आध घरी।
तब कौल-कली से दुऔ करजोरि,
तिया नित शंकर ओर करी ॥

मोही है ग्वाल गुपाल लखे
बृजबाल कछूक न भेदन पावै।
बोलै न बोल ठगी-सी लखै मनि
मैन के बानहिं यों अकुलावै।
रोमन अंग कदंब कली,
मन मै घनस्याम की यों छवि छावै ॥
सारति मद कपोल हँसी
उमगै अँसुआँ अखियाँ भरि आवै ॥

देखै न क्यों सुख मानि घनौ मन,
जा सुख मान कौ सोर भयौ है।
साँवरौ सुन्दर जो सिगरी
ब्रज-नारिन कौ चित्त चोर लयौ है।
आपुने आइ अटा मे भटू,
घनघोर घटान कौ मोर भयौ है।
नंद-किसोर झरोखे की ओर
सु तो मुख-चंद-चकोर भयौ है ॥

बाल के मिलन आस गए चित्र-साल लाल
ललकत पल एक धीरज न ठहरै।
सखी सब ल्याई नवला को छल-बल,
लखि-छबीलौ छबीली के सकल अग हहरै।
करी जोरावरी प्यारी सखी सेज ऊपर,
सु आँखिन के ऊपर ह्वे आँस यो ढरहरै।
चारु-कोस-मध्य मधुकर अकुलाने मानौ
छलकी सरोजन के ऊपर है लहरै ॥

वैस की उठौन ठौन रूप की अनूप, कान्ह ,
अग-अग औरै कछु ओप उलहति है ।
चिंतामनि चंचला विलास वो रसाल नैन
मदन के मद और आभा उमहति है ।
कुंदन की बेली-सी नबेली अलबेली बाल
केतिक गरब की सो गौरता गहति है ।
उझकि झरोखे तुम्हे चाहिबे कौ चदमुखी
द्यौसहू मे चद्रिका पसारति रहति है ।।

रास को बिलास देखि, चिंतामनि, धुनि सुनि—
मेखला की, झनक नूपुर बिछियन की ।
चद्रमुखी चन्द्रिका पसारी आनि अवनि मे
देखत जो धन्य दसा ताही के जियन की !
तुम्हें देखि प्यारी ऐसी मगन भई है, जाते
दरकि गई है तनी अँगिया सियन की ।
देखौ लला ललित छबीली ऐसी नीकी बनी
आवति जु फीकी करै दीपति दियन की ।।

बाजे जब बाजे महा मधुर नगर बीच
नागरि निखिल ललकनि अकलाई है ।
चितामनि कहै अति परम ललित रूप
अटा पर दूलह बिलोकन को आई हैं ।
फैलि महलनि मनि-मेखला झनक महा
मनि-नूपुरन की निनादन की झाँई है ।
पहिले उज्यारी तन-भूषन—मयूषन की
पाछे ते मयंक-मुखी झरोखन आई है ।।

अवलोकनि मै पलकै न लगै ,
पलकौ अवलोकि बिना ललकै ।
पति के परिपूरन प्रेम पगी ,
मन और सुभाव लगै न लकै ।

तिय की विहँसौही विलौकनि में ,
मनि आनँद आँखनि यों झलकै ।
रसवन्त कवित्तन कौ रसु ज्यों
अखरान के ऊपर ह्वै छलकै ॥

चैत की चाँदनी कैधौं चन्द अवलोकन ते
छीरनिधि छीर के पूरन-पूर उमगे ।
चिन्तामनि कहै मन आनँद मगन ह्वै कै
बिहरत दम्पती परम प्रेम सौ पगे ।
अधखुली अखियाँ सुरति-सुख रसबत
मानौ भौर अधखुले कमलनि मे खगे ।
प्यारी के सकल तन श्रम-जल-बिन्द सोहैं
कनक-लता मै मुकता-फल मनो लगे ॥

तुही धन, तुही प्रान, तोही मे हरी को मन
तेरे ही रिझाइबे की रीति मे प्रवीन है ।
चिंतामनि चिंता नित उन्हे लगी तेरी रहै
तेरे ही बिरह खिन खिन होत खीन है ।
ठीक जु न कीजै ठकुरायनि इतैक हठ ,
छोड़ दीजै, तेरे बृज-ठाकुर अधीन है ।
तू है पी के नैन-अरबिंदन की इन्दिरा ,
औ पी के नैन तेरे तनु-पानिप के मीन है ॥

गूँधति है मानौ मुकुताहल के हार वह
चारु नीर-नैननि की धार यों ढरति है ।
अरुन अधर कहि काहे को दुखित करै
कौन हेतु आजु ऊँची साँसन भरति है ।
अचल ह्वै रही केलि-मन्दिर में चिन्तामनि
सघन बदन चन्द चन्द्रिका परति है ।
बैठी कत आजु कर-कमल कपोल धरि
ध्यान तू कमल-नैनी कौन को करति है ॥

बा मनि - मन्दिर की छवि-वृन्द
छपाकर की छवि-पुंजनि पोख्यो
पाइ के स्वच्छ मनोहर चाँदनी,
चापु लै मैन महा बल रोख्यो।
सुन्दरि के मुख-चन्द को छाँड़ि,
चकोरन चन्द-मयूषन चोख्यो।
चन्द-सिलानि तै नीरु झर्यो,
सु सवै तिय को विरहागिनि सोख्यो॥

कहाँ जागे रैन आये निपट उनीदे हौ जू,
सोइ रहौ प्यारे बिछ्यौ आछौ परंजक है।
खेलत है चाँदनी में ग्वालन के संग कहूँ,
काहू ग्वाल ही को नाम लीजै कहो संक है।
यो ही भलेमानसै लगावती कलक हौ
वो देख्यो कहूँ चितामनि रतिहू को अंक है।
पीत रग अम्बर सो भयो नील रग, लाल,
झूठी हौ गोपाल तुम्है काहे को कलंक है॥

राति रहै मनि लाल कहूँ रमि
ह्याँ दुख बाल वियोग लहे है।
आए घरै अरुनोदय होत,
सरोस तिया इम बैन कहे है।
लाल भये दृग-कोरनि आनि कै
यो अंसुवान के वुन्द रहे है।
चोंचन चोप मनौ सिथिलै
विच खंजन दाड़िम-बीज गहै हैं॥

आनि-बधू रति - चिन्ह धरे इत,
प्रातहि प्रीतम आगम कीन्हो।
आली के हाथ मे आरसी दै मनि
नील -बधू भजि भीतर लीन्हो।

बोली सखी यह रूप की रेख
कहाँ यह वेष उपद्रव कीन्हो।
या मृग-नैनी पत्यानी मृगी को
कहा चित लाभ यों काहिल कीन्हो॥

साँझ ते चन्द कलंक उयौ,
मन मेरो लै साथ रहे तुम न्यारे।
बैठि बची मनि-मन्दिर बीच,
लगे तब दीप-प्रकास अँध्यारे॥
प्रातहि पाइ सुधामय पारनौ,
नैन-चकोर छके, नेभे सुखारे।
क्यों न अनूप कला प्रगटौ,
अकलंक कलानिधि मोहन प्यारे॥

बोलत काहे न बोल सुनें,
मधुरी बतियाँ मनमोहन भाखैं।
बोलै कहा, कछु चित्त मे ह्वै दुख,
पित्त बड़े कटु लागतीं दाखैं॥
ठाढ़े हैं लाल, बिलोकै न बाल क्यों,
तेरी बिलोकनि को अभिलाखैं।
लाल भई बिन काजहि आजु ए,
देखौ कहा, मेरी दूखती आँखैं॥

सरद ससी तैं अधससी ह्वै बची हौ,
कवि चिंतामनि तिमि हिमि सिसिर झमक तैं।
मारत मरूके बची बधिक बसन्त हू तैं,
पावक प्रचार बची, ग्रीषम तमक तैं।
आयौ पापी पावस ये, प्रान अकुलान लाग्यौ,
भयौ री असान घोर घन के घमक तैं।
ताप तैं [illegible] जो पै अमिय अचौगी आली!
[illegible] बचौंगी चपलान की [illegible] तैं।

ओढ़ै नील सारी घन-घटा कारी चिंतामनि ,
कंचुकी किनारी चारु चपला सुहाई है ।
इन्द्रबधू जुगनू जवाहिर की जगी जोति ,
बग-मुकतान माल, कैसी छबि छाई है ।
लाल पीत सेत बर बादर बसन तन ,
बोलत सु भृ गी, धुनि-नूपुर बजाई है ।
देखिबे को मोहन नवल नट-नागर को ,
बरषा नबेली अलबेली बनि आई है ॥

यों मन बैठी बिसूरति ही मधु मै
अब हौ न बचौगी अनंग सों ।
पीउ अचानक आइ गयो ,
सु पराय गयौ सिगरो दुख अंग सौं ।
बाहिर भीतर पूरन ऐसो
भयो घट मेरौ अनन्द-उमग सों ।
पूर उमग भगीरथ के तप ,
जैसे बिरचि-कमडल गग सो ॥

को महा मूढ छबली के अंगन
जाय पर्यौ ज्यौं ससारी बहीर मैं ।
ठानै अठान अधीन जो आपते
ताहि को आनि सकै पुनि तीर मैं ।
जोबन पूर बिलासन रग
उठै मन मोद उमंग समीर मैं ।
सैल-उरोज तैं कूदि पर्यो मनु
जाइ प्रभा-नदि-भौर गँभीर मैं ॥

—:००:—

बिहारी

मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँई परैं स्यामु हरित-दुति होइ ।।

या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोइ ।
ज्यौं ज्यौ बूड़ै स्याम रँग, त्यौं त्यौं उज्जलु होइ ।।

तजि तीरथ, हरि राधिका तन-दुति करि अनुरागु ।
जिहि ब्रज-केलि-निकुँज-मग पग-पग होतु प्रयागु ।।

नाचि अचानक ही उठे बिनु पावस बन मोर ।
जानति हौं, नन्दित करी यह दिसि नन्दकिसोर ।।

सोहत ओढे पीत पट स्याम सलोने गात ।
मनौ नीलमनि-सैल पर आतपु पर्‌यौ प्रभात ।।

अधर धरत हरि कै, परत ओठ डीठि पट-जोति ।
हरित बाँस की बाँसुरी इन्द्र-धनुष रँग होति ।।

अंग-अंग नग जगमगत दीपसिखा सी देह ।
दिया बढाऐ हूँ रहै बड़ौ उज्यारौ नेह ।।

छटी न सिसुता की झलक, झलक्यौ जोबनु अंग ।
दीपति देह दुहूनु मिलि दिपति ताफता-रग ।।

दुरत न कुच बिच कँचुकी चुपरी, सारी सेत ।
कबि आँकनु के अरथ लौ प्रगटि दिखाई देत ।।

मिलि चन्दन-बेंदी रही गोरै मुँह, न लखाइ ।
ज्यौ ज्यौ मद लाली चढै, त्यौं त्यौ उघरति जाइ ।।

तू रहि, हौं ही सखि लखौ, चढ़ि न अटा बलि बाल ।
सबहिनु बिनु ही ससि-उदै दीजतु अरघु अकाल ।।

ललित स्याम लीला, ललन, बढ़ी चिबुक छबि दून ।
मधु-छाक्यौ मधुकरु पर्‌यौ मनौ गुलाब-प्रसून ।।

भूषन-भारु सँभारिहै क्यौ इहि तन सुकुमार ।
सूधे पाँइ न धर परै सोभा ही के भार ।।

लिखन बैठि जाकी सबी गहि गहि गरब गरूर ।
भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ।।

मानहु बिधि तन-अच्छ-छबि स्वच्छ राखिवें काज ।
दृग-पग पौंछन कौ करे भूषन पायंदाज ।।

अरुन-बरन तरुनी-चरन - अँगुरी अति सुकुमार ।
चुवत सुरँगु रँगु सी मनौ चपि बिछियनु कै भार ।।

गडे, वड़े छबि-छाक छकि छिगुनो छोर छुटै न ।
रहे सुरँग रँग रँगि उही नह् दी महदी नैन ।।

छिप्यौ छबीलौ मुँह लसै नीलै अंचर चीर ।
मनौ कलानिधि झलमलै कालिंदी कै नीर ।।

अनियारे, दीरघ दृगनु किती न तरुनि समान ।
वह चितवनि औरै कछू जिहिं बस होत सुजान ।।

सटपटाति सै ससिमुखी मुख घूँघट-पटु ढाँकि ।
पावक-झर सी झमकि कै गई झरोखा झाँकि ।।

मोहि भरोसौ, रीझिहै उझकि झाँकि इक बार ।
रूप - रिझावनहारु वह, ए नैना रिझबार ।।

मुँहुँ धोवति, एड़ी घसति, हँसति, अनगवति तीर ।
धसति न इन्दीबरनयनि कालिंदी कै नीर ।।

मिलि परछाँही जोन्ह सौ रहे दुहुनु के गात ।
हरि राधा इक संग हीं चले गली महिं जात ।।

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात ।
भरे भौन मै करत है नैननु ही सब बात ॥

लखि गुरुजन-बिच कमल सौ सीसु छुवायौ स्याम ।
हरि-सनमुख करि आरसी हियैं लगाई बाम ॥

सतर भौंह, रुखे बचन, करति कठिनु मनु नीठि ।
कहा करौ, ह्वै जात हरि हेरि हँसौही डीठि ॥

छुटत मुठिनु सँग ही छुठी लोक-लाज, कुल-चाल ।
लगे दुहुनु इक बेर ही चल चित, नैंन, गुलाल ॥

ललन चलनु सुनि पलनु में अँसुवा झलके आइ ।
भई लखाइ न सखिनु हूँ झूठैं ही जमुहाइ ॥

नासा मोरि, नचाइ जे करी कका की सौह ।
काँटे सी कसकति हियै गड़ी कँटीली भौह ॥

दीप उजेरैं हू पतिहि हरत बसन रति काज ।
रही लपटि छबि की छटनु, नैंकौ छुटी न लाज ॥

बतरस-लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ ।
सौह करैं भौहनु हँसै, दैन कहै नटि जाइ ॥

भौंहनु त्रासति मुँह नटति आँखिनु सौ लपटाति ।
ऐंचि छुड़ावति करु, इँची आगैं आवति जाति ॥

रस भिजए दोऊ दुहूनु तउ टिकि रहे, टरै न ।
छबि सौ छिरकत प्रेम-रँगु भरि पिचकारी नैन ॥

रहैं निगोड़े नैन डिगि गहै न चेत अचेत ।
हौ कसुकै रिस के करौं, ये निसुके हँसि देत ॥

मुखु उघारि पिउ लखि रहत रह्यौ न गौ मिस-सैन ।
फरके ओठ, उठे पुलक, गए उघरि जुरि नैन ॥

मैं मिसहा सोयौ समुझि, मुँहु चूम्यौ ढिग जाइ ।
हँस्यौ, खिसानी, गल गह्यौ, रही गरैं लपटाइ ॥

डिगत पानि डिगुलात गिरि लखि सब ब्रज बेहाल ।
कपि किसोरी दरसि कै, खरै लजाने लाल ॥

कागद पर लिखत न बनत, कहत सँदेसु लजात ।
कहिहै सबु तेरौ हियो मेरे हिय की बात ॥

चलत चलत लौ लै चले सब सुख सग लगाइ ।
ग्रीषम-वासर सिसिर-निसि प्यौ मो पास बसाइ ॥

दृग उरझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति ।
परति गाँठि दुरजन हियै, दई, नई, यह रीति ॥

उड़ति गुडी लखि ललन की अँगना अँगना माँह ।
बौरी लौ दौरी फिरति छवति छबीली छाँह ।

क्यौ वसियै, क्यौ निबहियै, नीति नेह पुर नाँहि ।
लगालगी लोइन करै, नाहक मन बधि जाँहि ॥

अपना गरजनु बोलियतु कहा निहोरौ तोहिं ।
तू प्यारौ मो जीय कौ मो ज्यौ प्यारौ मोहिं ।

त्यौं त्यौ प्यासेई रहत ज्यौ ज्यौ पियत अघाइ ।
सगुन सलोने रूप की जु न चख-तृषा बुझाइ ॥

बाँम बाँह फरकति, मिलै जौ हरि जीवन-मूरि ।
तौ तोही सौ भेटिहौ राखि दाहिनी दूरि ॥

बिछुरै जिए, सकोच इहिं बोलत बनत न बैन ।
दोऊ दौरि लगे हिय किए लजौहैं नैन ॥

पिय कै ध्यान गही गही रही वही ह्वै नारि ।
आपु आपु ही आरसी लखि रीझति रिझवारि ॥

इन दुखिया अँखियानु कौ मुख सिरज्यौई नाँहि ।
देखै बने न देखतै, अनदेखैं अकुलाँहि ।।

नभ लाली, चाली निसा, चटकाली धुनि कीन ।
रति पाली आली अनत, आए बनमाली न ।।

बाल, कहा लाली भई लोइन-कोइनु माँह ।
लाल, तुम्हारे दृगनु की परी दृगनु मै छाँह ।।

बिथुर्‌यौ जावकु सौति-पग निरखि हँसी गहि गाँसु ।
सलज हँसौही लखि लियौ आधी हँसी उसाँसु ।।

जिहिं भामिनि भूषन रच्यौ चरन-महावर भाल ।
उही मनौ अँखियाँ रँगीं ओठनु कै रँग, लाल ।।

बामा, भामा, कामिनी कहि बोलौ, प्रानेस ।
प्यारी कहत खिसात नहि पावस चलत बिदेस ।।

अजौ न आए सहज रँग बिरह-दूबरै गात ।
अब ही कहा चलाइयति, ललन, चलन की बात ।।

हौ ही बौरी बिरह-बस, कै बौरौ सबु गाउँ ।
कहा जानि ए कहत है ससिहि सीतकर नाउँ ।।

स्याम-सुरति करि राधिका, तकति तरनिजा-तीरु ।
अँसुवनु करति तरौस कौ खिनकु खरौहौ नीरु ।।

रह्‌यौ ऐंचि, अंतु न लहै अवधि-दुसासनु-बीरु ।
आली, बाढतु बिरहु ज्यौ पचाली कौ चीरु ।।

बिरह-बिकल बिनु ही लिखी पाती दई पठाइ ।
आँक-बिहूनीयौ सुचित सूनै बाँचत जाइ ।।

मरिबे कौ साहसु ककै बढ़ै बिरह की पीर ।
दौरति ह्वै समुही ससी, सरसिज, सुरभि-समीर ।।

पलनु प्रगटि, बरुनीनु बढ़ि, नहीं कपोल ठहरात।
अँसुवा परि छतिया, छिनकु छनछनाइ, छिपि जात॥

मृगनैनी दृग की फरक, उर-उछाह तन-फूल।
बिन ही पिय आगम उमगि, पलटन लगी दुकूल॥

जद्यपि सुन्दर, सुघर, पुनि सगुनौ दीपक - देह।
तऊ प्रकासु करै तितौ, भरिये जितै सनेह॥

नाहिं परागु,नहि मधुर मधु,नहिं विकास इहि काल।
अली, कली ही सौं बध्यौ, आगैं कौन हवाल॥

स्वेद-सलिलु, रोमाँच-कुसु गहि दुलही अरु नाथ।
दियौ हियौ सँग हाथ के हथलेयँ ही हाथ॥

मानहु मुँह-दिखरावनी दुलहिंहि करि अनुरागु।
सासु सदनु मनु ललन हूँ, सौतिनु दियौ सुहागु॥

रनित भृंग-घटावली, झरति दान मधु-नीरु।
मंद मद आबतु चक्यौ कुंजरु कुंज - समीरु॥

चुवतु स्वेद मकरद-कन, तरु-तरु-तर बिरमाइ।
आवतु दच्छिन देस तै थक्यौ बटोही बाइ॥

सघन कुंज-छाया सुखद सीतल सुरभि-समीर।
मनु ह्वै जातु अजौ वहै वाहि जमुना के तीर॥

बैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन तन माँह।
देखि दुपहरी जेठ की छाँहौ चाहति छाँह॥

कहलाने एकत बसत अहि मयूर, मृग, बाघ।
जगतु तपोवन सौ कियौ दीरघ - दाघ निदाघ॥

अरुन सरोरुह-कर-चरन, दृग-खंजन, मुख-चंद।
समै आइ सुन्दरि सरद काहि न करति अनंद॥

छकि रसाल-सौरभ, सने मधुर माधुरी-गंध।
ठौर ठौर झौरत झँपत भौंर झौंर मधु-अंध॥

मतिराम

क्यों इन आँखिन सों निरसंक ह्वै ,
मोहन को तन-पानिप पीजै ।
नेकु निहारै कलंक लगै ,
इहि गाँव बसै कहौ कैसे के जीजै ।
होत रहै मन यों 'मतिराम' ,
कहूँ बन जाय बड़ो तप कीजै ।
ह्वै बनमाल हिए लगिए
अरू ह्वै मुरली अधरा-रस लीजै ॥

गुच्छनि के अवतस लस सिर ,
पच्छन अच्छ किरीट बनायो ।
पल्लव लाल समेत छरी ,
कर-पल्लव सों 'मतिराम' सुहायो ।
गुंजनि के उर मंजुल हार ,
निकुंजनि ते कढ़ि बाहर आयो ।
आज को रूप लखै नँदलाल को ,
आजुहि नैननि को फल पायो ॥

मोर पखा 'मतिराम' किरीट मैं ,
कंठ बनी बनमाल सुहाई ।
मोहन की मुसकानि मनोहर ,
कुंडल डोलनि मैं छबि छाई ।
लोचन लोल बिसाल बिलोकनि ,
को न बिलोकि भयो बस माई ।
वा मुख की मधुराई कहा कहौ ?
मीठी लगै अँखियान लुनाई ॥

आनन—पूरनचन्द लसै,
अरविंद-बिलास-बिलोचन पेखे।
अम्बर पीत लसै चपला,
छवि अम्बुद मेचक अंग उरेखे।
काम हूँ तै अभिराम महा,
'मतिराम' हिय निहचै करि लेखे।
तै बरनै निज बैनन सौ,
सखि, मैं निज नैनन सौ जन देखे॥

मोर-पखा 'मतिराम' किरीट,
मनोहर मूरति सौ मनु लैगो।
कुंडल डोलनि, गोल कपोलनि,
बोल सनेह के बीज-से बैगो।
लाल बिलोचनि-कौलन सौ,
मुसुकाइ इतै अरुझाइ चितैगो।
एक घरी घन-से तन सौ,
अँखियान घनों घनसार सौ दैगो॥

कुन्दन को रँगु फीको लगै,
झलके अति अंगन चारु गुराई।
आँखिन में अलसानि,
चितौनि मे मंजु बिलासन की सरसाई।
को बिन मोल बिकात नही,
'मतिराम' लहै मुसकानि-मिठाई।
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे ह्वै नैननि,
त्यों-त्यों खरी निकरै-सी निकाई॥

बानी को बसन कैधौ बात के बिलास डोलै,
केधो मुखचन्द चारु चन्द्रिका प्रकास है।
कबि 'मतिराम' कैधौ काम को सुजस?
कै पराग-पुंज-प्रफुलित-सुमन सुबास है।

नाक नथुनी के गजमोतिन की आभा कैधौं ?
देहवन्त प्रगटित हिए को हुलास है।
सीरे करिबे कों पिय-नैन घनसार कैधौं ?
बाल के बदन बिलसत मृदु हास है॥

कब की हौ देखति चरित्र निज आँखिन सौ
राधिका रसीली स्याम रसिक रसाल के।
'मतिराम' बरनै दुहुनि के मुदित अति,
मन भए मीन-से अमृतमय ताल के।
इकटक देखैं लिए व्रत-से निमेखनि के,
नेम किए मानौ पूरे प्रेम प्रतिपाल के।
लाल - मुख - इन्द नैन बाल के चकोर,
बाल-मुख-अरबिद-चचरीक नैन लाल के॥

वारने सकल एक रोरी ही की आड़ पर,
हा हा न पहरि आभरन और अग में।
कबि 'मतिराम' जैसे तीछन कटाछ तेरे,
ऐसे कहाँ सर है अनग के निखंग में।
सहज सुरूप सुघराई रीझो मन मेरो,
डोलत है तेरी अद्‌भुत की तरंग में।
सेत सारी ही सौ सब सौते रँगी स्याम रंग,
सेत सारी ही सौ रँगे स्याम लाल रग में॥

खेलन चोर-मिहीचनि आजु,
गई हुती पाछिले द्यौस की नाई।
आली कहा कहौ एक भई,
'मतिराम' नई यह बात तहाँई।
एकहि भौंन दुरे इक संग ही,
अंग सो अंग छुवायो कन्हाई।
कंप छुट्यो, घन स्वेद बढ़्यौ,
तनु रोम उठ्यो, अँखियाँ भरि आई॥

गौने के द्यौस सिंगारन को
'मतिराम' सहेलिन को गनु आयौ।
कंचन के विछिआ पहिरावत,
प्यारी सखी परिहास बढायौ।
"पीतम स्रौन समीप सदा वजैं,"
यौ कहि कै पहिले पहिरायौ।
कामिनी कौल चलावनि कौ,
कर ऊँचो कियौ पै चल्यौ न चलायौ॥

प्रान-पिया मन भावन सग,
अनंग-तरंगनि रंग पसारे।
सारी निसा 'मतिराम' मनोहर,
केलि के पुज हजार उघारे।
होत प्रभात चल्यौ चहै प्रीतम,
सुन्दरि के हिय मे दुख भारे।
चदसो आनन, दीप सी दीपति,
स्याम सरोज-से नैन निहारे॥

सोने की-सी वेली अति सुन्दर नवेली वाल,
ठाड़ी ही अकेली अलवेली द्वार महियाँ।
'मतिराम' आँखिन सुधा की वरखा सी भई,
गई जव दीठि वाके मुखचंद पहियाँ।
नेकु नीरे जाय करि वातनि लगाय करि,
कछु मन पाय हरि वाकी गही वहियाँ।
चैनन चरचि लई सैनन थकित भई,
नैनन मै चाह करै वैनन मैं नहियाँ॥

जमुना के तीर वहै सीतल समीर तहाँ,
मधुकर करत मधुर मद सोर है।
कवि 'मतिराम' तहाँ छवि सौ छवीली वैठी,
अंगन ते फैलत सुगंध के झकोर है।

पीतम बिहारी की निहारिबे को बाट ऐसी ,
चहूँ ओर दीरघ दृगनि करी दौर है ।
एक ओर मीन मनो, एक ओर कुज-पुंज ,
एक ओर खजन, चकोर एक ओर है ॥

अगन में चन्दन चढाय घनसार सेत ,
सारी छीर-फेन की-सी आभा उफनाति है ।
राजत रुचिर रुचि मोतिन के आभरन ,
कुसुम-कलित केस सोभा सरसाति है ।
कबि 'मतिराम' प्रानप्यारे सौ मिलन जात ,
करि कै मनोरथनि मृदु मुसकाति है ।
होति न लखाई निसि-चन्द की उज्यारी
मुख-चन्द की उज्यारी तन छाँहो छिप जाति है ॥

सारी जरतारी की झलक झलकति तैसी ,
केसरि को अगराग कीनो सब तन मे ।
तीखनि तरनि के किरन तें दुगुन जोति ,
जगत जवाहर-जटित आभरन मे ।
कबि 'मतिराम' आभा अगनि अँगारनि की
धूम की-सी धार छवि छाजती कचन मे
ग्रीषम-दुपहरी में हरि कौ मिलन जात ,
जानी जात नारि न दवारि-जुत बन मे ॥

साँझ ही सिगार सजि प्रानप्यारे पास जाति ,
बनिता बनक बनी बेलि-सी अनन्द की ।
कबि मतिराम कल किकनि की धुनि वाजै ,
मन्द-मन्द चलनि बिराजत गयन्द की ।
केसरि रँग्यो दुकूल, हाँसी में झरति फूल ,
केसनि में छाई छवि फूलन के बृन्द की ।
पीछे-पीछे आवत अँधेरी-सी भँवर-भीर ,
आगे-आगे फैलत उजारी मुखचन्द की ॥

लालन मे रति-नायक तै सुभ ,
सुन्दरता रुचि कुंजन पेखी ।
बाल में त्यो मतिराम कहै ,
रति ते अति रूप कला अवरेखी ।
सामुहि बैठी लखै इक सेज में ,
बोल अली सुख प्रीति विसेखी ।
भाल मे तेरे लिखी विधि सौ ,
यह लाल की मूरति लाल मे देखी ॥

प्रानपियारो मिल्यो सपने में ,
परो जब नेसुक नींद निहोरै ।
कन्त को आगम त्यौ ही जगाय ,
कह्यो सखी बोल पियूष निचोरै ।
यों 'मतिराम' भयो हिय मे सुख ,
बाल के बालम सौ दृग जोरै ।
जैसे मिही पट मे चटकीलो ,
चढै रँग तीसरी बार के बौरै ॥

बेलिन सो लपटाय रही है
तमालन की अवली अति कारी ।
कोकिल-केकी कपोतन के कुल ,
केलि करै जहाँ आँनद भारी ।
सोच करो जिन होहु दुखी ,
'मतिराम' प्रबीन सबै नर-नारी ।
मंजुल बजुल-कुजन मे ,
घन पुंज सखी ! ससुरारि तिहारी ॥

ह्यॉ मिलि मोहन सो 'मतिराम' ,
सुकेलि करी अति आनँदवारी ।
तेई लता-द्रुम देखत दुःख ,
चले अँसुवा अँखियान ते भारी ।

आवति हौ जमुना तट कौ,
नहि जानि परै बिछरे गिरिधारी।
जानति हौ सखि आवन चाहत,
कुंजन तै कढि कुजविहारी॥

सकल सिंगार साज सग लै सहेलिन कों,
सुन्दरि मिलन चली आनँद के कन्द को।
कवि 'मतिराम' मग करति मनोरथनि,
पेख्यो परजक पै न प्यारे नँदनन्द कों।
नेह तै लगी है देह दाहन दहत,
गेह बाग को बिलोकि द्रुम-वेलिन के बृन्द कों।
चन्द को हँसत तव आयो मुख-चन्द,
अब चन्द लाग्यो हँसन तिया के मुखचन्द को॥

बीति गई जुग जाम निसा,
'मतिराम' मिटी तम की सरसाई।
जानति हौ कहुँ और तिया से,
रहे रस मे रमि कै रसराई।
सोचति सेज परी यो नवेली,
सहेली सो जाति न बात सुनाई।
चन्द चढ्यो उदयाचल पै,
मुखचन्द पै आनि चढी पियराई॥

आई ऋतु पावस अकास आठौ दिसन में,
सोहत स्वरूप जलधरन की भीर को।
'मतिराम' सुकवि कदंबन की वास जुत,
सरस बढ़ावै रस परस समीर को।
भौन ते निकसि वृषभानु की कुमारि देख्यो,
ता समै सहेट को निकुंज गिर्यो तीर को।
नागरि के नैननि तै नीर को प्रवाह कढ़्यो,
निरखि प्रवाह बढ़्यो जमुना के नीर को॥

रावरे नेह को लाज तजी,
अरु गेह के काज सबै बिसराए।
डारि दिए गुरु लोगन को डर,
गाम चवाई मे नाम धराए।
हेत कियो हम जो तो कहा,
तुमतो 'मतिराम' सबै बिसराए।
कोऊ कितेक उपाय करौ,
कहुँ होत है आपने पीउ पराए॥

कोऊ नही बरजै मतिराम,
रहौ तित ही जित ही मन भायो।
काहे कौ सौहै हजार करौ,
तुम तौ कबहूँ अपराध न ठायो।
सोवन दीजै, न दीजे हमे दुख,
यो ही कहा रसवाद बढायो।
मान रहोई नही मनमोहन!
मानिनी होय सो मानै मनायो॥

आजु कहा तजि बैठी हो भूषण?
ऐसे ही अग कछू अरसीले।
बोलती बोल रुखाई लिए,
'मतिराम' सनेह सने न रसीले।
क्यो न कहौ दुख प्रान-प्रिया?
अँसुवानि रहै भरि नैन लजीले।
"कौन तिनै दुख है जिनके
तुम-से मनभावन छैल छबीले॥"

आई हौ पायँ दिवाय महावर,
कुंजन तै करिकै सुख-सैनी।
साँवरे आजु सँवार्यो है अंजन,
नैनन को लखि लाजति ऐनी॥

दोऊ अनंद सौ आँगनि माँझ
बिराजै असाढ़ की साँझ सुहाई।
प्यारी कौ बूझत और तिया को
अचानक नाँउ लियो रसिकाई।
आयौ उन्है मुँह में हँसी, कोपि
प्रिया सुर-चाप-सी भौह चढाई।
आँखिन तै गिरे आँसु के बूँद,
सुहासु गयौ उड़ि हस की नाँई॥

आयो प्रानपति • राति अनतै बिताय,
बैठी भौहन चढ़ाय रँगी सुन्दरी सुहाग की।
बातन बनाय पर्‍यो प्यारी के चरन आय,
छल सौ छिपाई छैल छबि रति-दाग की।
छूटि गयो मान लगी आपु ही सँवारन को
खिरकी सुकवि 'मतिराम' पिय - पाग की।
रिस ही के आँसू रस-आँसू भये आँखिन में,
रोस की ललाई सो ललाई अनुराग की॥

अटा ओर नँदलाल उत, निरखौ नैक निसंक।
चपला चपलाई तजी, चदा तजो कलंक॥

मुख-बिधु छिन-छिन यो रहे एक द्यौस की माँझ।
पून्यो हुती प्रभात अब, होति अमावस साँझ॥

बदन-इंदु तेरो अली, दृग अरविद अनूप।
तिनमें निसि-बासर सदा, बसत इदिरा-रूप॥

कमलमुखनि कुवलय दृगनि, कुमुद मधुर मुसक्यानि।
लखौ लाल ऊपर महल, कमलाकर सुखदानि॥

कनक-बेलि मे कोकनद, तामे स्याम सरोज।
तिनमे मृदु मुसक्यानि है, तामें मुदित मनोज॥

जरतारी सारी ढकै, नैन लसित मतिराम।
मनो कनक-पजर परे, खजरीटि अभिराम॥

स्याम बसन मे स्याम निसि, दुरै न तिय की देह।
पहुँचाई चहुँ ओर घिरि, भौर-भीर पिय-गेह॥

अधर-रग वेसरि-मुकत, मानिक-बानिक लेत।
हँसत वदन दीपति बहुरि, होति हीर छबि सेत॥

लसत मुकुत रुचि लाल की. तेरे ओठनि सेइ।
अति अद्भुत यह बात पुनि, लाल मुकुत रुचि लेइ॥

मुकत हार हरि के हिये, मरकत मनिमय होत।
पुनि पावत रुचि राधिका-मुख-मुसक्यानि-उदोत॥

सुनि सुनि गुन सब गोपिकनि, समझ्यो सरस सवाद।
कढी अधर की माधुरी, मुरली ह्वै करि नाद॥

लीने तो अँखियानि उन, औ मुसक्यानि रसाल।
तुहूँ लाल लोचननि की लेहि लालसा बाल॥

ध्यान करत नँदलाल कौ, नए नेह मे बाम।
तनु बूड़त रँग पीत मे, मन बूडत रँग स्याम॥

लसत कोकनद करनि मे, यो मिहँदी के दाग।
ओस-विंदु परि कै मिट्यो, मनो पल्लवनि राग॥

पियत रहै अधरानि को रसु, अति मधुर अमोल।
तातै मीठे कढत है, लाल वदन के बोल॥

दहूँ अटारिन मे सखी, लखी अपूरब बात।
उतै इन्दु मुरझात है, इतै कज कुम्हिलात॥

पीउ न आयो, नींद को मूँदे लोचन बाल।
पलक उघारै पलक मे, आओ होइ न लाल॥

नैन मान वह लाल के, लाज जाल परि आनि।
पियत रहत तो वदन की, सुधा मधुर मुसक्यानि॥

पिय-मिलाप के हेतु तिय, सजे उछाह सिगार।
दृग-कमलनि के द्वार मे, बाँधे बंदनवार॥

नहीं सुहाइ परगोत है, गोत आपनो पाइ।
बिदा करी कुल कानि की, नैननि नैन बसाइ॥

हियो हिए सौं मिल चल्यौ नैन चले मिल नैन।
इतै उतै मारी फिरै, लाज कहूँ ठहरे न॥

मनतै नैननि को चली, नैननि ते मन काज।
द्वै दीपक की छाँह लो बीच बिलानी लाज॥

बिन देखे दुख के चलै, देखै सुख के जाहि।
कहो लाल उन दृगनि के, अँसुवा क्यो ठहराहि॥

बाल निहाल भई लखै, ललित लाल-मुख-इंदु।
मनु पियूष बरषा भई, नैननि झलके बिंदु॥

कौन बसत है कौन मै, यों कछु कही परै न।
पिय नैननि तिय-नैन हैं, तिय-नैननि पिय नैन॥

श्रम-जल कन-झलकन लगे अलकनि कलित कपोल।
पलकनि रस छलकन लगे, ललकन लोचन लोल॥

चलन लगी अखियाँ चपल चलन लगी लखि छाँह।
तन जोबन आवन लग्यो, मनभावन मन माँह॥

नखतावलि नख, इंदु मुख, तनु-दुति दीप अनूप।
होति निसा नँदलाल-मन, लखे तिहारो रूप॥

पिय-आगम सुनि बाल-तन, बाढ़े हरष बिलास।
प्रथम बूँद बारिद उठै, ज्यो बसमती सबास॥

ककट काढ़त लाल की चचल चाह निबाहि।
चरन खैंच लीनो तिया, हँसि झूठे करि आहि॥

सपने हू मनभावतो, करत नही अपराध।
मेरे मन हू मे सखी, रही मान की साध॥

बासन को पानिप घट्यो, तन-पानिप की आस।
मिटी पथिक की बदन तै, लगी दृगनि मे प्यास॥

मन भावन को भाँवती, भेटति रस-उतकठ।
बाँही छटे न कठ तै, नाँही छुटै न कठ॥

झूठे ही ब्रज मे लग्यो, मोहि कलंक गुपाल।
सपने हूँ कबहूँ हिए, लगे न तुम नँदलाल॥

लाज छुटी, गेह्यो छुट्यो, सुख सौ छुट्यो सनेह।
सखि कहियौ वा निठुर सो रही छूटवे देह॥

कत सजनी है अनमनी, अँसुआ भरति ससक।
बडे भाग नँदलाल सो, झूठेहु लगत कलक॥

तुम सौ कीजै मान क्यो, ब्रजनायक मन-रज।
बात कहत यो बाल के, भरि आये दृग-कंज॥

बैठो आनन कमल के, अरुन अधर-दल आइ।
काटन चाहत भाँवते, दीजै भौर उडाइ॥

जानति सौति अनीति है, जानति सखी सुनीति।
गुरुजन जानत लाज है, प्रीतम जानत प्रीति॥

फूलति कली गुलाब की, सखि यह रूप लखै न।
मनो बुलावति मधुप को, दै चुटकी की सैन॥

घन आनन्द

तीछन ईछन बान बखान सो,
पैनी दसान लै सान चढ़ावत।
प्रानन प्यारे, भरे अति पानिप,
मायल घायल चोप चटावत।
यौ घनआनँद छावत भावत,
जान-सजीवन-ओर तैं आवत।
लोग है लागि कबित्त बनावत,
मोहिं तौ मेरे कबित्त बनावत॥

नेही महा ब्रजभाषा-प्रबीन औ,
सुन्दरतानि के भेद कों जानै।
जोग-बियोग की रीति में कोविद,
भावना भेद-स्वरूप कों ठानै।
चाह के रंग मे भीज्यो हियो,
बिछुड़ें मिलै प्रीतम सांति न मानै।
भाषा-प्रवीन, सुछंद सदा रहै,
सो घन जी के कवित्त बखाने॥

प्रेम सदा अति ऊँचो लहै सु,
कहै इहि भाँति की बात छकी।
सुनि कै सब के मन लालच दौरै,
पै बौरे लखैं सब बुद्धि-चकी।
जग की कबिताई के धोखें रहै,
ह्याँ प्रबीनन की मति जाति जकी।
समझै कबिता घनआनँद की,
हिय-आँखिन नेह की पीर तकी॥

निरखि सुजान प्यारे रावरो रुचिर रूप,
बावरो भयौ है मन मेरो न सिखै सुनै।
मति अति छाकी गति थाकी रतिरस भीजि,
रीझ की उझलि घनआनँद रह्यो उनै।
नैन बैन चित-चैन है न मेरे बस, मेरी,
दसा अचिरज देखौ बूड़ति गहें गुनै।
नेह लाय कैसे अब रूखे हूजयत हाय,
चद ही के चाय च्वै चकोर चिनगी चुनै॥

हीन भएँ जल मीन अधीन,
कहा कछु मो अकुलानि समानै।
नीर सनेही कौ लाय कलंक,
निरास ह्वै कायर त्यागत प्रानै।
प्रीति की रीति सु क्यौं समझै जड़,
मीत के पानि परे को प्रमानै।
या मन की जु दसा घनआनँद,
जीब की जीवनि जानि ही जानै॥

पहलै घनआनँद सीच सुजान,
कहीं बतियाँ अति प्यार पगी।
अब लाय बियोग की लाय बलाय,
बढाय बिसास-दगानि दगी।
अँखियाँ दुखियानि कुबानि परी,
न कहूँ लगै कौन घरी सु लगी।
मति दौरि थकी न लहै ठिक ठौर,
अमोही के मोह-मिठास ठगी॥

मन-पारद कूप लौं रूप चहें,
उमहै सु रहै नहि जेतो गहौ।
गुन-गाड़नि जाय परे अकुलाय,
मनोज के ओजनि सूल सहौ।

घनआनँद चेटक धूम में प्रान घुटैं,
न छुटैं गति कासों कहौं।
उर आवत यौं छबि-छाँह ज्यौं हौं,
ब्रजछैल की गैल सदाई रहौं॥

रससागर नागर स्याम लखें,
अभिलाषनि-धार-मँझार बहौं।
सु न सूझत धीर को तीर कहूँ,
पचि हारि कै लाज सिवार गहौं।
घनआनँद एक अचंभो बड़ो गुन,
हाथ हूँ बूड़ति कासौं कहौ।
उर आवत यों छबि-छाँह ज्यौं हौ,
ब्रजछैल की गैल सदाई रहौं॥

तब तौ छबि पीवत जीवत हे,
अब सोचन लोचन जात जरे।
हित-पोषके तोष सु प्रान पले,
बिललात महादुख-दोष-भरे।
घनआनँद मीत सुजान बिना,
सबही सुख साज समाज टरे।
तब हार पहार से लागत हे,
अब आनि के बीच पहार परे॥

पहिलै अपनाय सुजान सनेह सौं,
क्यौं फिरि तेह कै तोरिये जू।
निरधार अधार दै धार-मँझार,
दई गहि बाँह न बोरिये जू।
घनआनँद आपने चातक कों,
गुन-बाँधिलै मोह न छोरियै जू।
रस प्याय कै ज्याय वढ़ाय कै आस,
-बिलास में यौ विष घोरिये जू।

रावरे रूप की रीति अनूप,
नयो नयो लागत ज्यौं ज्यौं निहारियै।
त्यौं इन आँखिन बानि अनोखी
अघानि कहूँ नहिं आन तिहारियै।
एक ही जीव हुतौ सु तौ वार्‌यौ,
सुजान सकोच औ सोच सहारियै।
रोकि रहै न, दहै घनआनँद,
बावरी रीझ के हाथनि हारियै॥

तब तौ दुरि दूरहि तै मुसकाय,
बचाय कै और कि दीठि हँसे।
दरसाय मनोज की मूरति ऐसी,
रचाय कै नैननि मैं सरसे।
अब तौ उर माँहि बसाय कै मारत,
ए जू बिसासि कहाँ धौं बसे।
कुछ नेह-निवाह न जानत हे तौ,
सनेह की धार मै काहे धँसे॥

रूप-चमूप सज्यौ दल देखि,
भज्यो तजि देसहि धीर-मवासी।
नैन मिलै उर के पुर पैठते,
लाज लुटी न छुटी तिनका सी।
प्रेम दुहाई फिरी घनआनँद,
बाँधि लिये कुल-नेम गुढ़ासी।
रीझ सुजान सची पटरानी,
बची बुधि बापुरी ह्वै करि दासी॥

जोरि कै कोरिक प्रानिन भावते,
संग लिये अँखियानि मैं आवत।
भीजे कटाछन सो घनआनँद,
छाय महारस कौं बरसावत।

ओट भएँ फिरि या जिय की गति ,
जानत जीवनि ह्वै जु जनावत ।
मीत सुजान अनूठिये रीति ,
जिवाय कै मारत मारि जिवावत ॥

फेलि रही धर अबर पूरि ,
मरीचिनि-बीचिनि-संग हिलोरति ।
भौंर-भरी उफनति खरी सु ,
उपाव की नाव तरेरनि तोरति ।
क्यौ बचियै भजि हू घनआनँद ,
बैठि रहै घर पैठि ढँढोरति ।
जोन्ह प्रलै के पयोनिधि लौ ,
बढ़ि बेरिनि आज बियोगिनि बोरति ॥

आई है दिवारी चीते काजनि जिवारी प्यारी ,
खेलै मिलि जूवा पैज पूरे दाव पावही ।
हारहि उतारि जीते मीत-धन लच्छनि सो ,
चोप-चढ़े बैन चैन-चहल मचावही ।
रग सरसावै बरसावै घनआनँद ,
उमग-ओपे अगनि अनग दरसावही ।
दियरा जगाय जागै पिय पाय तिय रागै ,
हियरा जगाय हम जोगहि जगावही ॥

लाखनि भाँति भरे अभिलाषनि ,
कै पल पाँवड़े पंथ निहारै ।
लाड़िली आवनि लालसा लागि ,
न लागत है मन मैं पन धारै ।
यौं रस भीजे रहै घनआनँद ,
रीझे सुजान सरूप तिहारै ।
चायनि - बावरे नैन कबै ,
अँसुवान सौं रावरे पाय पखारैं ॥

आवें कहूँ मनमोहन मो लगी,
पूरब-भागनि को व्रत ऊजै।
हाय कछू न बस्याय तवै,
दुरि देखिवो दूभर, छाँह क्यों छूजै।
माँगति हौ बिधिना पै बड़े खन,
जौ कबहूँ जिय आसहि पूजै।
चौथि को चंद लखे ब्रजचंद सों,
लागै कलक तौ ऊजरे हूजै॥

दरसत-लालसा-ललक-छलकनि पूरि,
पलकनि लागै लगि आवनि अरबरी।
सुदर सुजान मुखचद को उदै विलोके,
लोचन-चकोर सेवै आरति-परव री।
अंग-अग अतर उमंग-रंग भरि भारी,
बाढ़ी चोप चुहल की हिय मै हरबरी।
बूड़ि-बूड़ि तरै औधि-थाह घनआनँद यौं
जीव सूक्यौ जाय ज्यौं ज्यौं भीजत सरवरी॥

रावरे गुननि बाँधि लियो हियो जान प्यारे,
इतै पै अचभो छोरि दीनी जु सुरति है।
उघरि नचाय आपु चाय मै रचाय हाय,
क्यौ करि बचाय दीठि यौ करि दुरति है।
तुम हूँ ते न्यारी है तिहारी प्रीति-रीति जानी,
ढीले हू परे ते गरे गाँठि सी घुरति है।
कैसे घनआनँद अदोषनि लगैये खोरि,
खेलनि खिलार की परेखनि मुरत है॥

घेर्‌यो घट आय अंतराय-पटनि-पट पै,
ता मधि उजारे प्यारे पानस के दीप हौ।
लोचन पतग सग तजै न तऊ सुजान,
प्रान-हस राखिबे कौं धरे ध्यान-सीप हौ।

ऐसें कहौ कैसे घनआनँद बताऊँ दूरि,
मन-सिंहासन बैठे सुरत-महीप हौ।
दीठि-आगे डोलौ जौ न बोलौ कहा बस लागै,
मोहिं तो बियोग हूँ मै दीसत समीप हौ॥

जब तैं निहारे इन आँखिन सुजान प्यारे,
तब ते गही है उर आन देखिबे की आन।
रस-भीजे बैननि लुभाय के रचे है तहाँ,
मधु-मकरंद सुधा नावौ न सुनत कान।
प्रानप्यारी ज्यारी घनआनँद गुननि कथा,
रसनौ रसीली निसिबासर करत गान।
अंग-अंग मेरे उन ही के संग रंग रँगे,
मन-सिंहासन पै बिराजै निज ही को ध्यान॥

ढिग बैठे हू पैठि रहै उर मैं,
घर कै सुख को दुख दोहत है।
दृग-आगे तैं बैरी टरै न कहूँ,
जगि जोहन-अन्तर जोहत है।
घनआनँद मीत सुजान मिलै,
बसि बीच तऊ मन मोहत है।
यह कैसो सँजोग न बूझि परै,
जु बियोग न क्यौं हूँ बिछोहत है।

नैन कहै सुनि रे मन! कान दै,
क्यौ इतनो गुन मेटि दयौ है।
सुन्दर प्यारे सुजान को मन्दिर,
बावरे तू हमही ते भयौ है।
लोभी तिन्है तनकौ न दिखावत,
ऐसो महा मद छाकि गयौ है।
कीजिये जू घनआनँद आय कै,
पाय परौ यह न्याय नयो है॥

लै ही रहै हौ सदा मन और को ,
दैबो न जानत जान दुलारे ।
देख्यो न है सपने हूँ कहूँ दुख ,
त्यागे सकोच औ सोच सुखारे ।
कैसो सँजोग वियोग धौ आहि !
फिरौ घनआनँद ह्वै मतवारे ।
मो गति बूझि परै तब ही ,
जब होहु घरीक हू आप तै न्यारे ।।

डगमगी डगनि-धरनि छबि ही के भार ,
ढरनि छवीले उर आछी बनमाल की ।
सुन्दर बदन पर कोरिक मदन बारौ ,
चित चुभी चितवनि लोचन बिसाल की ।
काल्हि इहि गली अली निकस्यो अचानक ह्वै ,
कहा कहौ अटक भटक तिहि काल की ।
भिजई हो रोम रोम आनन्द के घन छाय ,
बसी मेरी आँखिन मैं धावनि गुपाल की ।

मुख देखै गौहन लगेई फिरै भौर झौर ,
छूटे बार हेरि कै पपीहा-पुंज छावही ।
गति-रीझे चायनि सों पावन-परस-काजे ,
रसलोभी बिबस मराल-जाल धावही ।
याते मन होय प्रान-संपुट मै गोय राखौ ,
ऐसे हूँ निगोड़े नैन कैसै चेन पावही ।
सीचियै अनँदघन जान प्यारी जैसे जानौ ,
दुसह दसा की बातें बरनी न आवही ।।

मोर चन्द्रिका सी सब देखन कौं धरे रहै ,
सूछम अगाध-रूप-साध उर आनही ।
जाहि सूझ तिनहूँ सों देखि भूली ऐसी दसा ,
ताहि ते बिचारे जड़ कैसे पहचानहीं ।

जान प्रानप्यारे के बिलोके अबिलोकिबे को,
हरष - विषाद - स्वाद - बाद अनुमानहीं।
चाह मीठी पीर जिन्है उठति अनन्दघन,
तेई आँखै साखै और पाखै कहा जानहीं॥

रति-सुख-स्वेद-ओप्यौ आनँद बिलोकि प्यारे,
प्रानिनि सिहाय मोह-मादिक महा छकै।
पीतपट छोर लै लै ढोरत समीर धीर,
चुबनि की चाड़नि लुभाय रही नासकै।
परसि सरस बिधि रुचिर चिबुक त्यौ ही,
कंपति करनि केलि-भाव-दाँव ह्वै तकै।
लाजनि लसौहीं चितवनि चाहि जान प्यारी,
सीचति अनदघन हाँसी सौं भरीन कै॥

जौ उहि ओर घटा घनघोर सो,
चातक मोर उछाहनि फूलते।
त्यौं घनआनँद औसर साजि,
सँजोगिनि झुड हिंडोरनि झूलते।
ग्रीषम ते हतई जु लता,
द्रुम-अकनि लागती ह्वै रसमूल ते।
तौ सजनी! जिय-ज्यावन जान सु,
क्यौं इत की हित की सुधि भूलते॥

अति सूधो सनेह को मारग है,
जहाँ नेकु सयानपन बाँक नही।
तहाँ साँचे चलैं तजि आपुनपौ,
झझकै कपटी जे निसाँक नही।
घनआनँद प्यारे सुजान सुनौ,
यहाँ एक ते दूसरो आँक नही।
तुम कौन धौ पाटी पढ़े हौ कहु,
मन लेहु पै देहु छटाँक नही॥

चूर भयौ चित पूरि परेखिन ,
एहो कठोर अजौ दुख पीसत ।
साँस हियै न समाय सकोचनि ,
हाय इते पर बान कसीसत ।
ओटनि चोट करी घनआनँद ,
नीके रही निसद्यौस असीसत ।
प्राननि बीच बसे ही सुजान पै ,
अँखिन दोष कहा जु न दीसत ॥

ज्यौ बहरै न कहूँ ठहरै मन ,
देह सो आहि विदेह को लेखौ ।
देखति जो दुखिया अखियाँ नित ,
बैरियौ की सुपने सुख खौ ।
हौ तौ सुजान महा घनआनँद ,
पै पहिचानि की राख न रेखौ ।
हाय दई वह कौन भई गति ,
प्रीति मिटे हूँ मिटै न परेखौ ॥

दृग-नीर सों दीठिहि देहूँ बहाय पै ,
वा मुख कों अभिलाषि रही ।
रसना विष बोरि गिराहि गसों ,
वह नाम सुधानिधि भाखि रही ।
घनआनँद जान - सुबैननि त्यों ,
रचि कान बचे रुचि साखि रही ।
निज जीवन पाय पलै कबहूँ ,
पिय-कारन यौं जिय राखि रही ॥

जिनकों नित नीके निहारति हीं ,
तिनकों अँखियाँ अब रोवति है ।
पल-पावड़े पायनि चायनि सों ,
अँसुवान के धारनि धोवति है ।

घनआनँद जान सजीवनि कों
सपने बिन पाएँई खोवति है।
न खुली मुदी जानि परैं कछु,
दुखहाई जगे पर सोवति है॥

पहिले पहिचानि जु मानि लई,
अब तो सु भई देख मूल महा।
इत के हित बैर लियो उत ह्वै,
करि ज्यौहरि ब्यौहरि लोभ महा।
घनआनँद मीत सुनो अरु ऊतर,
दूरते देहु न देहु हहा।
तुम्है पाय अजू हम खौयौ सबै,
हमें खोय कहौ तुम पायौ कहा॥

सावन - आवन हेरि सखी!
मन-भावन-आवन-चोप बिसेखी।
छाए कहूँ घनआनँद जान,
सम्हारि की ठौर लै भूलनि लेखी।
बूँदैं लगैं सब अंग दगैं,
उलटी गति आपने पापनि पेखी।
पौन सौं जागति आगि सुनीही पै,
पानी तै लागति आँखिन देखी॥

एरे बीर पौन! तेरो सबै ओर गौन,
बीरी तो सो और कौन, मनै ढरकौ ही वानि दै।
जगत के प्रान, ओछे बड़े सों समान,
घनआनँद - निधान सुखदान दुखियानि दै।
जान उजियारे गुन-भारे अंत मोही प्यारे,
अब ह्वै अमोही बैठे, पीठि पहिचानि दै।
बिरह-बिथाहि मूरि, आँखिन मैं राखौ पूरि,
धूरि तिनि पायनि की हा हा! नेकु आनि दै॥

परकाजहि देह को धारि फिरौ,
परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि-नीर सुधा के समान करौ,
सब ही बिधि सज्जनता सरसौ।
घनआनँद जीवन-दायक हौ,
कछू मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन,
मो अँसुवानहि लै बरसौ॥

राधा नव यौवन विलास को बसंत जहाँ,
अङ्ग अङ्ग रगनि बिकास ही की भीर है।
प्यारी बनमाली घनआनँद सुजान सेवैं,
जाहि देखि काम के हिये मैं नाहि धीर है।
सुरनि समाज साज कोकिल कुहूक जानैं,
साँसन अनेक सुख-सौरभ-समीर है।
स्वाद-मकरद को मनोरथ मधुप-पुंज,
मंजु बृंदावन देस जमुना के तीर है॥

चाहिये न कछू जाकी चाह तासौ फल पायौ,
यातै वाही बन के सरूप नैन कीनो घरु।
जहाँ राधा-केलि-बेलि-कुल की छवनि छायो,
लसत सदाई कूल कालिंदी सुदेस थरु।
महा घनआनँद फुहार सुख सार सींचै,
हित-उतसवनि लगाय रग-भर्‌यो झरु।
प्रेम-रस-मूल-फूल-मूरति बिराजौ,
मेरे मन-आलबाल कृस्न-कृपा को कलपतरु॥

एकै डोलै बेचत गुपालहि दहेड़ी लियें,
नैननि समायौ सोही बैनन जनात है।
और उठिबोलै आगै लावरी कहा है मोल,
कैसो धौ जम्यौ है ज्यों सबादै ललचात है॥

आनँद को घन छायौ रहत सदा ही ब्रज,
चोपन पपीहा लौं चहूँगा मँडरात है।
गोकुल बधून की बिकन पै विकाय रह्यौ,
गली गली गोरस ह्वै मोहन बिकात है॥

ब्रज बृन्दाबन गिरि गोधन जमुन-तीर,
सुबस सुदेस पुर बन सुख-साधा को।
जाकी भूमि भागहि सिहात है गिरीस ईस,
धूरि रसमूरि हरै दुख सब बाधा को।
एक रह बिहरत दोऊ महारस भीजै,
आनँद-पयोद प्रीति परम अराधा को।
स्याम के सरूप को कछुक निरधार होय,
तौ कछु कह्यो परे अगाध प्रेम राधा को।

झलकै अति सुन्दर आनन गौर,
छकै दृग राजत काननि ह्वै।
हँसि बोलनि मै छबि-फूलन की,
बरषा उर-ऊपर जाति है ह्वै।
लट लोल कपोल कलोल करे,
कल कठ बनी जलजावलि दवै।
अँग-अँग तरग उठै दुति की,
परिहै मनौ रूप अबै धर च्वै॥

लाजनि लपेटी चितवनि भेद-भाय-भरी,
लसति ललित लोल-चख-तिरछानि मै।
छवि को सदन गोरो बदन, रुचिर भाल,
रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानि मै।
दसन दमकि फैलि हिये मोती-माल होति,

रस-आरस मोय उठी कछु सोय,
लगी लसै पीक-पगी पलकै।
घनआनँद ओप बढी मुख औरै सु,
फैलि भवी सुथरी अलकै।
अँगराति जम्हाति लसै सब अङ्ग,
अनगहि अंग दिपै झलकैं।
अधरानि मै आधिय बात धरै,
लड़कानि की आनि परै छलकैं॥

बक बिलास रँगीले रसाल,
छबीलै कटाछ-कलानि में पंडित।
साँवल सेत निकाई निकेत,
हियै हरि लेत है आरस-मंडित।
बेधि कै प्रान करैं फिरि दान,
सुजान खरे भरे नेह अखंडित।
आनँद - आसव - घूमरे नैन,
मनोज के चोजनि ओज प्रचंडित॥

जात नए नए नेह के भार,
बिधे उर ओर घनी बरुनी के।
आनँद मै मुसक्यानि उदोत मैं,
होत है रोल तमील अमी के।
भोर की आवनि प्रान अँकोर किये
तित ही चलि आए जही के।
डारियै जू तिन तोरि कै,
लालन और दिनान तै लागत नीके॥

बिभाकर-कुँवरि तमालन की पाँति बीच,
बीचिनि मरीचै जागि लागति जगमगी।
भावना भरोने हिय, गहर भँवर परै,
एकरस राग धुनि रंगनि रँगमगी।

चातकी भई है चाहि आनँद के अंबुद को,
बन घन ढूँढ़े रीझि डोलती डगमगी।
प्रेम की पसीजनि प्रबाह-रूप देखियत,
सदा स्याम के सिंगार-सार सों सगमगी।।

सुन्दर सरस लीनो ललित रँगीलो मुख,
जोवन झलक क्यौ हूँ कही न परति है।
लोचन चपल चितवनि चाय-चोज-भरी,
भृकुटि सुठौन भेद-भायनि ढरति है।
नासिका रुचिर अधरनि लाली सहजै ही,
हँसनि दसन-जोति हियरा हरति है।
नख-सिख आनँद उमग की तरग बढ़ि,
अंग अंग आली छबि छलक्यौ करति है।।

खेलत खिलार गुन-आगर उदार,
राधा नागरि छबीली फाग राग सरसाति है।
भाग-भरे भावते सौ औसर फव्यो है आनि,
आनँद कै घन की घमंड दरसाति है।
औचक निसंक अंक चाँपि खेल-घूँघरि में,
सखिन त्यौ सैननि ही चैननि सिहाति है।
केसू-रंग बोरि गोरे करि स्याम सुन्दर कों,
गोरी स्याम-रंग बीच बूड़ि-बूड़ि जाति है।।

सौंधे सनी अलकैं बगरीं मुख,
जोवन-जोन्ह सों चंदहि चोरति।
अंगनि रग-तरंग बढ़ी सु,
किती उपमानि के पानिप ढोरति।
मोहन सों रस-फाग रची सु,
भली भई हौ कब तै हि निहोरति।
आनँद को घन रीझनि भीजि,
भिजै पठई कहा चीर निचोरति।।

रतिरंग रागे प्रीति पागे रैन-जागे नैन,
आवत लगेई घूमि झूमि छवि सों छके।
सहज बिलोल परे केलि की कलोलन मैं,
कबहूँ उमगि रहे कबहूँ जके थके।
नीकी पलकनि पीक-लीक-झलकनि सोहै,
रस-बलकनि उनमदि न कहूँ सके।
सुखद सुजान घनआनँद पोखत प्रान,
अचिर जखानि उघरे हु लाज सों ढके॥

केलि की कलानिधानि सुन्दरि सुजान महा,
आन न समान छवि-छाँह पै छिपैयै सौनि।
माधुरी-मुदित मुख उदित सुसील भाल,
चंचल बिसाल नैन लाज-भीजियै चितौनि।
पिय-अंग-संग घनआनँद उमंग हिय,
सुरति - तरंग रस - बिवस - उर - मिलौनि।
झूलनि अलक, आधी खुलनि पलक,
स्रम स्वेदहि झलक भरि ललक सिथिल हौनि॥

सींचे रस-रंग अंग फूलि फैलि छवि दवि,
देखि देखि मालती-लतानि उकसाति है।
आछे काछे मधुप कुमार कोटि ओटि कीजै,
अलक छवीलो मन छूटियौ कसति है।
कहा कहौं राधे घनआनँद पिया के हिय,
बसि रसि जैसी मेरी आँखिनि सतति है।
कौन धौं अनूँठी अभी प्यावै जिय ज्यावै भावै,
एरी तेरी हँसनि वसन्त कों हँसति है॥

देखि धौं आरसी लै बलि नेकु,
लसी है गुराई में कैसी ललाई।
मानौ उदोत दिवाकर की दुति,
पूरन चंदहि भैंटन आई।

श्रीपति

घूँघट उदय गिरिवर ते निकसि रूप,
सुधा सौ कलित छबि-कीरति बगारो है।
हरिन डिटौना स्याम, सुख सील बरषत,
करषत सोक अति तिमिर बिदारो है।
श्रीपति बिलोकि सौति वारिज मलिन होत,
हरषि कुमुक फूलै नन्द को दुलारो है।
रजन मदन तन गजन विरह, विवि-
खंजन सहित चंदबदन तहारो है॥

हारिजात बारिजात मालती बिदारि जात,
वारि जात पारिजात सोधन मै करी-सी।
माखन-सी मैन-सी मुरारी मखमल-सम,
कोमल सरस तन-फूलन की छरी-सी।
गहगही गरुवी गुराई गोरी गोरे गात,
श्रीपति बिलोर-सीसी ईंगुर सो भरी-सी।
विज्जु थिर धरी-सी कनक-रेख करी - सी,
प्रबाल-छबि हरी सी लसत लाल लरी-सी॥

कैसे रतिरानी के सिधारे कवि श्रीपति जू,
जैसे कलधौत के सरोरुह सवारे है।
कैसे कलधौत के सरोरुह सवारे कहि,
जैसे रूपनट गे बटा से छबि ढारे है।
कैसे रूप नट के बटा से छबि ढारे कहू,
जैसे काम भूपति के उलटे नगारे है।
कैसे काम भूपति के उलटे नगारे कहू,
जैसे प्राणप्यारी ऊँचे उरज तिहारे है॥

अमल अटारी, चित्रसारी वारी रावटी में,
बारहै दुवारी मैं केवारीं गंधसार की।
कमानल छाय रह्यौ चाँदनी बिछौना पर,
छवि फबि रही छीर-सागर-कुमार की।
श्रीपति गुलाब वारे छूटत फुहारे प्यारे,
लपटे चलत तर-अतर बयार की।
भूषन निवारी, घनसार भीजि सारी,
झरि, तऊ न बुझानि नेक ग्रीषम के झार की॥

ग्रीषम मैं भीषम ह्वै तपत सहस कर,
बापी ताल नारे नदो नद सूखि जात है।
झंझा-पौन झरपि-झरपि झकझोरि कोरि,
धूरिधार धूसरै दिगत ना दिखात है।
'श्रीपति' सुकवि कहै, आली बनमाली बिन,
खाली जग मोहिं कैसे बासर बिहात है।
ताबा सो अजिर लगै, लावा सौ तचत घर,
भयौ गिरि आवा सो, पजावा सौ धुँवात है।

विकल सकल जल थलन के जीव होत,
जेठ की जलाकनि मैं पुहुमी तपति है।
सरित सरोवर रसाल जलहीन भए,
सूखे तरु पसु हू पखेरुन बिपति है।
ग्रीषम-तपनि, दूजै बिरह तपनि बाढ़ी,
ता पै ये लपटि झपटि लपटति है।
सीरे उपचारन तैं जारत अनंग अंग,
पिय विन मान याकौ कैसे कै रहति है॥

घन दरसावन है, बिज्जु तरपावन है,
चहुँ ओर धावन है, बैहर सगाढ़ की।
मानिनी मनावन है, मोर हरषावन है,
दादुर बोलावन है, अति आढ़-आढ़ की।

श्रीपति सुहावन है, झिल्ली झनकावन हैं,
विरही सतावन है, चिंता चित बाढ की।
लगन लगावन है, मदन जगावन है,
चातक की गावन है, आपन असाढ़ की॥

बैठि अटा पर औधि बिसूरति,
पाय सँदेस न श्रीपति पी के।
देखत छाती फटै निपटै,
उछटै जब बिज्जु-छटा छवि नीके।
कोकिल कूकैं लगैं मन लूकैं,
उठै हिय हूकैं वियोगिन ती के।
बारि के बाहक, देह के दाहक,
आये बलाहक गाहक जी के॥

कंत बिन भावत सदन ना सजनि,
मोपै विरह प्रबल मेनमत कोप्यौ बाढ के।
श्रीपति कलोलै बोलै कोकिल अमोलै,
खोले मौन-गाँठ तोपे गौन राखे आढ आढ़ के।
हहरि हहरि हिय, कहरि कहरि करि,
थहरि थहरि दिन बीते जिय गाढ़ के।
लहरि लहरि बिज्जु फहरि फहरि आवै,
घहरि घहरि उठै बादर अषाढ़ के॥

धूम से धुँधारे कहूँ काजर से कारे,
ये निपट बिकरारे, मोहि लागत सघन के।
श्रीपति सुहावन, सलिल बरसावन,
सरीर में लगावन, बियोगिनि तियन के।
दरजि दरजि हिय, लरजि लरजि करि,
अरजि अरजि परे दूत ये मदन के।
बरजि बरजि अति, तरजि तरजि मोपै,
गरजि गरजि उठै बादर गगन के॥

तेरेई वे झमकै लखिकै,
जुगुनून की जे तन लूकै लगीं।
वरि की सुधि कै दरकी छतियाँ,
जब सीरी बयारिकी झूकै लगी।
भनै श्रीपति आप घटा घहरै,
हहरै हियरा अति ह्वै कै लगीं।
अब कैसे बनाव बनैगौ पिया विज,
पापिनी कोकिल कूकै लगी॥

छायौ नभ-मंडल घुमड़ि घन श्रीपति जू,
आनँद अथोर चारो ओर उमँगत है।
पायौ मद मालती कौ, कुज कुंज गूँजत है—
भौंर दुख-पुज गेह गेह ते भगत है।
धायौ देस-देस ते विदेसी सब कठ लायौ,
निज-निज ती को, भरौ मोदहि जगत है।
आयौ सखी सावन, सोहावन सही,

पै मोहि बिन मनभावन भयावन लगत है॥
तम की जमक, बक पाँति की चमक,
ज्योति-झीगन झमक,चमकन चपलान की।
बैहर झकोरै, मोरै रोरै चहूँ ओरै सोरै,
प्रेम के हलोरै घोरै धुनि धुरवान की।
रतियाँ जमकि आईं, छतियाँ उमँगि आईं,
पतियाँ न आई प्यारे श्रीपति सुजान की।
नेह-तरजन बिरहा के सरजन सुनि,

मान मरदन, गरजन बदरान की॥
पपिहा की पुकार परी है चहूँ,
बन में गन मोरन गावन के।
कहि श्रीपति सागर से उमगे,
तरु तोरत तीर सुहावन के।

बिरहानल ज्वाल दहै तन कों,
किन होत सखी पग बावन के।
दिन गे मनभावन आवन के,
घहरान लगे घन सावन के॥

आढ़ आढ़ करत असाढ आयौ मेरी आली,
डर सौ लगति देखि तम के नमाक तैं।
श्रीपति ये मैन-माते मोरन के बैनु सुनि,
परत न चैन बुँदियान के झनाक तैं।
झिल्ली-गन झाँझ झनकारैं न सँभारैं नेक,
दादुर दपट बीज तरसै तमाक तैं।
भरकी बिरह आग, करकी कठिन छाती,
दरकी सजल जलधर की धमाक तैं॥

जलभरे झूमे मनौ भूमैं परसत आइ,
दस हू दिसान घूमैं, दामिनि लए-लए।
धूमधारे धूसर से, धुरवा धुँधारे कारे,
धुरवान धारे धावैं छबि सौ छए-छए।
श्रीपति सुजान कहै घरी-घरी घहरात,
तापत अतन तन ताप सों तए-तए।
लाल बिन कैसे लाज-चादर रहैगी बीर,
कादर करत मोहि बादर नए-नए।

ये घन घोर उठे चहुँ ओर
इन्हें लखि का करिहै रिस ह्वै तू।
सौति पै जाइ है जो कमलापति,
पाइ है छाँह छिनेक न छ्वै तू।
जानि लई अब हू सिगरी,
कलपैहै सु हाथ के हीर कों ख्वै तू।
पाँय परै हू न मानती री,
अब जा जनि! ऐसी मिजाजनि है तू॥

आवते गाढ़ असाढ़ के बादर ,
मो तन में अति आगि लगावते ।
गावते चाव चढे पपिहा ,
जिन मोसों अनंग सों बैर बँधावते ।
धावते बारि भरे बदरा ,
कवि श्रीपति जू हियरा डरपावते ।
पावते मोहि न जीवते प्रीतम ,
जो नहिं पावस में घर आवते ।।

धावनि धुँघारे धुधरान की निहारि जिय ,
चातक मयूर पिक आनँद मगन भौ ।
श्रीपति जू सावन सोहावन के आवन में ,
विरह सुभट ते बियोगिनी कौ रन भौ ।
जलमयी धरनि, तिमिरमयी देह दीसी ,
घनमयी गगन, तड़ितमयी घन भौ ।
छविमयी बन भौ, बिलासमयी तन भौ ,
सनेहमयी जन भौ, मदनमयी मन भौ ।।

मदमयी कोयल मगन ह्वै करत कूकै ,
जलमयी मही, पग परत न मग में ।
बिज्जु नाचे घन मे, विरह हिय बीच नाचैं ,
मीचु नाँचे ब्रज मे, मयूर नाँचैं नग में ।
श्रीपति सुकवि कहै साबन में आवन—
पाथिक लागे, आनँद भयौ है अंग-अंग में ।
देह छायौ मदन, अछेह तम छिति छायौ ,
मेह छायौ गगन, सनेह छायौ जग में ।।

घाँघरे की घुमड़ि, उमड़ि चारु चूनरी की ,
पाँयन मलूक मखमल बरजोरे की ।
भृकुटी बिकट, छूटी अलकैं कपोलन पै ,
बड़ी बड़ी आँखिन मे छबि लाल डोरे की ।

तरवन तरल जड़ाऊ जरवीले जोर,
स्वेदकन-ललित-वलित मुख मोरे की।
भूलत न भामिनी की गावन गुमान-भरी,
सावन मे श्रीपति मँचावन हिंडोरे की।

फूले आस-पास काँस, विमल विकास बास,
रही न निसानी कहूँ महि में गरद की।
राजत कमल-दल ऊपर मधुप,
मैन छाप-सी दिखाई, छवि विरह-फरद की।
श्रीपति रसिकलाल आली! बनमाली विन,
कछू न जुगति मेरे जीय के दरद की।
हरद समान तन भयौ है जरद अव,
करद-सी लागत है, चाँदनी सरद की॥

—:००:—

सोमनाथ

(ससिनाथ)

बीती लरिकाई न झलक तरुनाई आई,
निरखै सुहाई अंग औरैं ओप अति है।
तुला चल संक्रमन की-सी दिन राति,
कोऊ घटि बढ़ि है न संधि ठीक ठहरति है।
दरस कौ अंत ज्यो उजेरी न अँधेरो पाख,
सोमनाथ उपमा प्रमान परसति है।
दोऊ बैस-सधि में छबीली प्रानप्यारी वह,
अरुन-उदै की कंज-कली-सी लसति है॥

छटिकै कटि रंचक छीन भई,
गति नैननि की तिरछान लगी।
ससिनाथ कहै उर ऊपर तैं,
अँचरा उघरे तें लजान लगी।
लरकाई के खेलि पछेलि कछूक,
सयानि सखीन पत्यान लगी।
पिय नाम सुनैं तिय घोसक तैं,
दुरिकै मुरिकै मुसक्यान लगी॥

खेलत ही सखियान के संग में,
प्रेम-रसै अवरेखन लागी।
आए तहीं ससिनाथ सुजान,
मनोभव-मूरति पेखन लागी।
आपनी छाँहि हूँ सों डरपै,
यों कलंक अलंकहि लेखन लागी।

रचि भूषन आइ अलीन के सग ते,
सासु के पास बिराजि गई।
मुख चद मऊषनि सो ससिनाथ,
सबै घर में छबि छाजि गई।
इनकौ पति ऐहै सवार सखी कह्यौ,
यों सुनि कै हिय लाजि गई।
सुख पाइकै, नार नबाइ तिया,
मुसक्याइ कै भौन में भाजि गई॥

सुवरन रग सुकुमारी सबै भामिन के,
अंगन उछाह की लहर लहरी रहति।
भूषन वसन चारु दसन हँसन अरु,
नैननि में प्रेम-रस प्यास गहरी रहति।
सोमनाथ प्यारे अलि भामरी भरति रहैं,
चहूँधा चकोरन की चौकी ठहरी रहति।
सरद को चंद कैसे कहौ मुख-चंद सम,
छहूँ रितु जाकी छवि-छटा छहरी रहति॥

मंदिर की दुति यों दरसी,
जनु रूप के पत्र अलेखन लागे।
हौं गई चाँदनी हेरन कों,
तहँ क्यों हूँ घरीक निमेष न लागे।
डीठ पर्‌यौ नयौ कौतुक ह्वाँ,
ससिनाथ जू यातै बड़े खन लागे।
पीठि दै चंद की ओर चकोर,
सबै मिलि मो मुख देखन लागे।

लाल दुकूल सजै रुचि सौ
सब ही सो निसंक न लाज रही गहै।
और की औरहि बात कहै,
ससिनाथ कितौ समुझाइ सखी कहै।

पौंछत स्वेदन अंगनि तै,
सु अनग-कला अति ही चित में चहै।
जानि परै न कछू उर की,
निसि बासर बाम की भौह चढ़ी रहै॥

न्हाइवे जाइ तौ संग सखी बनि,
पामरे पामरी के करिबौ करै।
केसर लाइ सँवारि कै आड़,
निहारि कै नेह नदी-तारिबौ करै।
जो ससिनाथ न डीठि परै,
कुल-कानि तै नारि कछू डरिबौ करै।
तौ निसि-बासर साँवरिया,
घर की नित भाँमरिया भरिबौ करै।

सरसाए दुकूल सुगंध सो सानि,
सबै, रति-मँदिर बास रह्यौ।
रँग-रग के अंग अनूप सिगार,
सिगार निहारि कै मोद लह्यौ।
पुनि बीरी खबावत हू ससिनाथ,
सुजान सों प्यारी कछू न कह्यौ।
जब लागन लागे महावर पॉइ,
तबै मुस्क्याइ कै हाथ गह्यौ॥

ठाड़ी बतरात इतरात ही परौसिन ते,
जैसी तिय दूसरी न पूरब पछॉह में।
दीठि परि गए तहॉ सुन्दर सुजान कान्ह,
औचक ही प्रकट छिपति परछॉह में।
सोमनाथ त्यों ही प्रान प्यारे को सुनाय कह्यो,
तिय ने सखीसो तरुनाई के उछॉह में।
बंसीवट-निकट हमे तू मिलियो री कालिद,
कातिक मे न्हाऊँगी तरैयन की छॉह में॥

खेलि है लाल के सग चलो,
कहिकै उर मे मति औरई ठानी।
यो बहकाइ कै नेह बढ़ाइ,
मयकमुखी रति-मन्दिर आनी।
ह्वाँ न लखे ससिनाथ सुजान,
कछूक तही ठठकी ठकुरानी।
है न सयान रती भर हू,
अलबेली तऊ हिय मे अकुलानी॥

उज्जल सरद-चद-चद्रिका अनंद दुति,
त्रिविध समीर की झकोर आनि फहरे।
मुकता अनिद मकरन्द के से बिद चारु,
बदनारबिद की छबीली छटा छहरै।
साजि रग-रगनि के सुदर सिंगार प्यारी,
गई केलि धाम दूजी जामनी की पहरै।
पेखि परजक नदनद बिन सोमनाथ,
लागी अग उठनि भुजग की-सी लहरें॥

निसि अत ह्वै आए प्रभात भए,
गति पाँइन औरई पाइ लई।
ससिनाथ उनीदी झुकै अँखियाँ,
पगिया उन फेरि बनाइ लई।
रति-चिन्ह न पूछति जानि सुजान,
हँसी मिस बाल भुलाइ लई।
कर चाव अमोल कपोलन चूमि,
भुजा भार कंठ लगाइ लई॥

उतई है मन, यातें सूधे न परत पाग,
अंग अरसात भुरहरै उठि आए हो।
रँगमगी अँखियाँ अनूप रूप चोरै लेत,
सोमनाथ आछै यहि रूप सखि पाए हो।

हम सों तौ विहँस बिलोकिबौ विसार्यौ पिय ,
सबै बिधि उनई के हाथन बिकाए हौ ।
काहे को नटत, बेई बैनन प्रकट होत ,
अनुराग जिनकौ लिलार धरि आए हौ ॥

हरि तौ मनुहार मनाइ गए ,
जिनपै जियरा रति वारति है ।
ससिनाथ मनोज की ज्वालनि सों ,
अब कुन्दन सौ तन जारति है ।
उठि लेटति सेज पै चन्द्रमुखी ,
पछिताइ कै पौरि निहारति है ।
न कहै मुख तैं दुख अन्तर कौ ,
अँसुआनि सों आँखि पखारति है ॥

सासु के वास बिसारे सबै ,
उपसाहन हू ते निसकिन हौ भई ।
लीक अलीक न जानी कछू ,
ठकुरानी कहाइ सु रकिन हौ भई ।
जा ससिनाथ सुजान के काज ,
तजे सुख-साज अलंकिन हौ भई ।
री, तिन सो हित तोरि कै हाय !
बृथा ब्रज माँहि कलंकनि हौं भई ॥

चारु निहार तरैयन की दुति ,
लाग्यौ महा बिरहा तन तावन ।
हे ससिनाथ कहा कहिए ,
जिन सौं लगि नैन ही कज से पावन ।
बीच दुकूल के फूलन लै ,
अलवेली के, प्रेम कौ सिधु बढावन ।
कान्ह दिवारी की रैनि चले ,
बरसाने मनोज कौ मत्र जगावन ॥

आली ! बहु बासर बिताए ध्यान धरि धीर ,
　　तिनकौ सुफल नैन दरसन पावेगे ।
होत है री सगुन सुहावने प्रभात ही तैं ,
　　अंगन मे अधिक विनोद सरसावेगे ।
सोमनाथ हरैं हरैं बतियाँ अनूठी कहि ,
　　गूढ़ विरहानल की तपनि बुझावेगे ।
सबही ते प्यारे प्रान, प्रानन ते प्यारे पति ,
　　पति हू ते प्यारे व्रजपति आज आवेगे ।।

दिसि विदिसनि ते उमड़ि मढि लीन्हौ नभ ,
　　छेड़ि दीनौ धुरवा जवासे जूथ झरिगे ।
डहडहे भए द्रुम रचक हवा के गुन ,
　　कहूँ कहूँ मुरवा पुकारि मोद भरिगे ।
रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत ही ,
　　सोमनाथ कहै बूँदाबूँदी हू न करिगे ।
सोर भयौ घोर, चहूँ ओर महि-मडल मे ,
　　आए घन, आए घन, आय कै उघरिगे ।।

बादर उतत अंग डोलत अनग भरे ,
　　बगन कतार दंत दीरघ सँवारे है ।
चरखी चमक, तरकत ओ गरज गूँज ,
　　बरषै मदन निसि नीर के पनारे हैं ।।
सोमनाथ प्यारे नंद-नद के बिरह जानि ,
　　व्रज मे कुमगन करोर हनकारे हैं ।
आए घन भारे मे बिचार उर धारे अरी !
　　कारे रग बारे ए मतंग मतवारे हैं ।।

—:oo:—

रसलीन

(रस-प्रबोध से)

चित चाहत अलि अग तुव लहि दीपक परिमान ।
लै लै जन्म पतंग को सदा वारिये प्रान ॥

नैन चहै मुख देखिये मन सों कछू दुराइ ।
मन चाहत द्रग मूँदि कै लीजै हिय लगाइ ॥

गिरजा शिव तन मैं रही कमला हरि हिय पाय ।
तू तन हरि हिय पिय बसी, हिय हरी प्रानन जाय ॥

मुख-ससि निरखि चकोर अरुतन-पानिप लखिमीन ।
पद- पकज देखत भवर, होत नयन रस - लीन ॥

सौतिन मुख निसि कमल भी पिय-चख भये चकोर ।
गुरुजन मन-सागर भये लखि दुलहिन मुख ओर ॥

जब तै आई तड़ित लौ नीलांबर मैं कौधि ।
तब ते हरि चकृत भये लगी चखनि चक चौधि ।

मोहन लखि यह सबन ह्वै उदास दिन रात ।
उमहति हँसति जकति डरति विगचति बिलखि रिसाति ।।

यौं बाला-जोबन-झलक झलकति उर मे आइ ।
ज्यौं प्रगटत मन को बचन बिब पुतरिन दरसाइ ॥

तिय सैसव-जोबन मिले भेद न जान्यो जात ।
प्रात समै निसि-द्यौस के दोउ भाव दरसात ॥

ज्यौं वय-तिथि बाढ़ति कला जौबन ससि अधिकात ।
त्यौ सिसुता-निसि-तिमिर घट छवि कर ठेलति जात ॥

सखी गुनति जौ तिय गुनन रुच तकि विहँसि लजात ।
मानहु कमल कलीन बिच अली विहसि रहि जात ।।

पिय चितवततिय मुरि गई कुल-हित पट मुख लाइ ।
अमी चकोरन के पियत घन लीनो ससि छाइ ।।

दीपक लौं झाँपति हुती ललन होति यह बात ।
ताहि चलत अब फूल लौ विगसन लाग्यो गात ।।

कहूँ ठगे कतहूँ खगे अति सगबगे सनेह ।
लाज-पगे द्रग रगमगे जगे कौन के गेह ।।

तुम अवसेरत मो द्रगन गई नीद जु हिराइ ।
सोई लाल लगी मनो द्रगन तिहारे आइ ।।

लाल एक-द्रग-आग्नि ते जारि दियो सिव मैन ।
करि ल्यायै मो दहन कों तुम द्वै पावक नैन ।।

राधा-तन फूलन मिलो पातन हरि को गात ।
नूपुर- धुनि खग-धुनि मिली भले बने सब सात ।।

नैन - चकोरन चंद्रिका प्यारो आजु निसंक ।
आस-वास आवत नखत लीने बीच ससंक ।।

पिय के रंग भये बिना मिलन होत नहि वाम ।
याते तू रँग स्याम ह्वै मिलन चली है स्याम ।।

अंग छपावति सुरति सों चली जाति यों नारि ।
खोलति विज्जुछटा चितै ढाँपति घटा निहारि ।।

स्वेत-वसन-जुत जोन्हमैं यौ तिय-दुति दरसाइ ।
मनो चली छीरधि-सुता छीरि-सिंदु मैं जाइ ।।

पिय विनती करि फिरि गये सो कलेस सरसाइ ।
तिय-मुख-अबुंज तै निकसि मधुप रीति दुरिजाइ ।।

वाम नैन फरकत भयो वामा आनँद आइ।
खिनि उघरति खिनि मुँदति है बादर-धूप सुभाइ ॥

लाजवती परदेस तें पिय आयो सुधि पाइ।
निसि-दिन मधु के कमल लौ विकसत सकुचत जाइ ॥

कहाँ गये वे जलद जे नित उठि जारत जाइ।
गाइ मलार बुलाइए तऊ न परत लखाइ ॥

—:oo:—

कविंद उदयनाथ

तिय तन अरुन दिनेस उदयौ है आनि,
साँझ सिसुताई के तिमिर सब भागे हैं।
फैलि रही अंबर मैं चहूँ ओर अरुनाई,
फूले नैन-कंज मकरन्द रस-पागे हैं।
उदैनाथ कंत के मनोरथ हू पथै चले,
चित चतुराई तजि आरस को जागे हैं।
रूप के सरोवर में नाह-नैन न्हान लाग,
सौतिन के मान तेऊ दान होन लागे हैं।।

चंद सौ बदन, चंद्रिका सी चारु सेत सारी,
तैसिए गुराई गसी उरज उतंग की।
हेरि के हिए कौ हार हारिनी हरिन-नैनी,
हेरै हिए हरषै सखी त्यौं सैन संग की।
भनत कविंद सोहै वासक नवेली नारि,
बाढ़ी चित चाह, जाकैं आगम उमंग की।
जगर-मगर बैठी सेज पै नगर-बाल,
आली लाल मोहिबे को बाला ज्यों अनंग की।

अरसोंहैं नन करि, सरसौंहै मुसकाति,
त्यौं त्यौ अकुलाति ज्यों ज्यों होत आली प्रात री।
दाऊ वे परसपर पीवत अधर रस,
चूमि-चूमि चटकीलौ मुख-जलजात री।
भनत कविद भरि-भरि अक ह्वै निसंक,
नेह-भरे फिरि-फिरि दोऊ बतरात री।
बिछुरन करत दुहूँ कें गात ही तें दुवौ—
लपटि-लपटि जात, नैंकु न अघात री॥

गहरी गुराई त प्रथम चूर चामीकर,
चपक कैं ऊपरि बहुरि पाम रौप्यौ है।
तीसरे अखिल अरविंद आभा बम करि,
हँसै छड़िता को हाइ तो पद में तोप्यौ है।
भनत कविद तेरे मान समे सौते कहा,
सुर-बनितान कौ गुमान जात लोप्यो है।
आली! आज मेरे जानि, ऐठ भरौ मुख—
भौहै तान, सौहै री, कलानिधि पै कोप्यौ है॥
गुंजरत भौरन के पुंजक निकुंजन तै,

आए हौ, भयौ है स्रम आवत औ जात कौ।
आँखिन तैं उलटी ललाई परै आलस की,
अंगन तै उँमगै थके-लौ अँगरात कौ।
भनत कविद घाम ग्रीषम दुपहरी की,
तीखन लग्यौ है तन परिमित वात कौ।
पकज के पातन की पौन करौ प्रानप्यारे,
पौढ़ौ परजक पै, पसीना मिटे गात कौ॥

कैसी ही लगत, जामै लगन लगाई तुम,
प्रेम की पगनि के परेखे हिए कसके।
केतिकौ छिपाइ के [illegible] उपजाइ प्यारे,
तुम ते [illegible] बढ़ाए चोप चसके।

भनत कविंद हमैं कुज मे बुलाइ करि,
बसे कित जाय, दुख देकर अवम के।
पगन मे छाले परे नांघिवे को नाले परे,
तऊ लाल ! लाले परे, राउरे दरस के ॥

राजै रसमै री तैसी वरषा समै री चढी,
चचला नचै री चकचौधा कौधा वारै री।
व्रती व्रत हारैं हिए परत फुहारैं,
कछू छोरैं कछू धारैं जलधर जलधारैं री।
भनत कविंद कुजभौन पौन सौरभ सों,
काके न कपाय प्रान परहथ पारैं री।
काम-कदुका से फूल डोलि डोलि डारैं,
मन औरैं किए डारैं ये कदबन की डारैं री ॥

——:००:——

दास

करैं दास दया वह बानी सदा,
कवि आनन कौल जु बैठी लसै।
महिमा जग छाई नवो रस की,
तन पोषक नाम धरै छै रसै।
जग जाके प्रसाद लता पर शैल,
ससी पर पकज-पत्र बसै।
करि भाँति अनेकन यों रचना,
जो बिरंचिहु की रचना को हँसै॥

है रति को सुखदायक मोहन,
यों मकराकृत कुंडल साजै।
चित्रित फूलन को धनुबान,
तन्यो गुन-भौरकी पाँति को भ्राजै।
सुभ्र स्वरूपन में गनौ एक,
विवेक हनै तिय सैन समाजै।
दास जू आज बने ब्रज में,
ब्रजराज सदेह अदेह बिराजै॥

सखि बामै जगे छनजोति छटा,
इत पीट पटा दिन रैन मड़ो।
वह नीर कहूँ बरसै सरसै,
यह तो रस-जाल सदाही अड़ो।
वह सेत ह्वै जातो अपानिप ह्वै,
एहि रंग अलौकिक रूप गड़ो।
कह दास बराबरि कौन करै,
घन सों घनस्याम सों बीच बड़ो॥

आनन मैं मुसुकानि सुहावनि,
बकता नैनन्ह माँझ छई है।
बैन खुले मुकुले उरजात,
जकी विथकी गति ठौनि ठई है।
दास प्रभा उछलै सब अग,
सुरग सुबासता फैलि गई है।
चन्दमुखी तन पाइ नवीनो,
भई तरुनाई अनन्द मई है॥

आनन है अरविंद न फूले,
अलीगन मूले कहा मडरात हौ।
कीर तुम्हें कहा वाय लगी,
भ्रम विम्ब के ओठन को ललचात हो।
दास जू ब्याली न वेनी-बनाव है,
पापी कलापी कहा इतरात हौ।
बोलती बाल न वाजती बीन,
कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ॥

कंज के सम्पुट है ये खरे,
हिय मैं गड़िजात ज्यों कुत की कौर है।
मेरु है पै हरि हाथ मे आवत,
चक्रवती पै बड़ेई कठोर हैं।
भावती तेरे उरोजनि मे गुन—
दास लख्यौ सब ओरई और है।
सभु है पै उपजावै मनोज,
सुवृत्त है पै पर-चित के चोर है॥

भावी भूत वर्तमान मानवी न होई ऐसी,
देवी दानवीन हूँ सो न्यारो एक डौरई।
या बिधि की वनिता जो बिधना वनायो चहै,
दास तौ समुझिये प्रकासै निज वौरई।

कैसे लिखे चित्र को चितेरो चकिजात लखि,
दिन द्वैक बीते दुति औरै और दोरई।
आज भोर औरई पहर होत औरई है,
दुपहर ओरई रजनि होत ओरई॥

आरज आइबो आली कह्यो,
भजि सामुहें ते गई ओंट मैं प्यारी।
एकहि एड़ी महावर दै श्रम,
ते दुहुँ फैली खरी अरुनारी।
दास न जाने धौ कौन है दीबो,
चितै दुहुँ पायन नाइनि हारी।
आप कह्यो अरी दाहिने दै,
मोहि जानि परै पग बाम है भारी॥

भावतो आवतो जानि नवेली,
चमेली के कुज जो बैठत जाइ कै।
दास प्रसूनन सोनजुही करै,
कचन-सी तन जोति मिलाइ कै।
चौंकि मनोरथ ह्व हँसि लेन,
चलै पगु लाल प्रभा महि छाइ कै।
बीर करै करबीर झरै
निरखै हरखै छबि आपनि पाइ कै॥

पन्ना संग पन्ना ह्वै प्रकासत छनक,
लै कनक रंग पुनि पै कुरगन पलत है।
अधर-ललाई लावै लाल की ललक पाये,
अलक झलक भरकत सों हलत है।
ऊदौ अरुनौहै पीत पाटल हरौहै ह्वै कै,
दुति लै दुहूँधा दास नैनन छलत है।
समरथ नीके बहुरूपिया लौ थानही में,
मोती नथुनी के बर बानो बदलत है॥

आरसी को आँगन सुहायो मनभायो,
नहरन में भरायो जल उज्ज्वल सुमन माल।
चाँदनी विचित्र लखि चाँदनी बिछौने पर,
दूरि कै सहेलिन को बिलसै अकेली बाल।
दास आस पास बहु भाँतिन बिराजै घरे,
पन्ना पुखराज मोती मानिक पदिक लाल।
चन्द्र-प्रतिविम्ब तें न न्यारो होत मुख, औ न
तारे-प्रतिबिम्बन तें न्यारो होत नगजाल॥

बाते स्यामा-स्याम की न कैसी अब आली,
स्याम स्यामा तकि भाजै स्यामा स्याम सों जकी रहै।
अब तो लखोई करैं स्यामा को वदन स्याम,
स्याम के बदन लागी स्यामा की टकी रहै।
दास अब स्यामा के सुभाय मद छाके स्याम,
स्यामा-स्याम सोभन के आसव छकी रहै।
स्यामा के बिलोचन के है री स्याम तारे अरु,
स्यामा स्याम-लोचन की लोहित लकीर है॥

कोन सिंगार है मोरपखा यह,
लाल छुटे कच काँति की जोटी।
गुंज के माल कहा यह तो,
अनुराग गरे पर्यो लै निज खोटी।
दास बड़ी बड़ी बातें कहा करौ,
आपने अँग की देखो करोटी।
जानो नही यह कचन से,
तिय के तन के कसिबे की कसोटी।

नैनन को तरसैये कहाँ लौ,
कहाँ लौं हिये बिरहागि मै तैये।
एक घरी न कहूँ कल पैये,
कहाँ लगि प्रानन की कलपैये।

आवै यही अब जी में विचार,
सखी चल सौतिहुँ के घर जैये।
मान घटे ते कहा घटिहै जु पै,
प्रानपियारे कौ देखन पैये ॥

चन्द चढ़ि देखै चारु आनन प्रवीन,
गति लीन होत माते गजराजनि को ठिलि-ठिलि।
बारिधर-धारन तैं बारन पै ह्वै रहै,
पयोधरन छवै रहै पहारनि को पिलि-पिलि।
दई निरदई दास दीन्हों है विदेस तऊ,
करौ न अँदेस तुव ध्यान ही में हिलि-हिलि।
एक दुख तेरे हौ दुखारी न तु प्रानप्यारी,
मेरो मन तोसो नित आवत है मिलि-मिलि ॥

बार अँध्यारनि मे भटक्यो सु,
निकार्यो मैं नीठि सु बुद्धिनि सो घिरि।
बूड़त आनन पानिप-नीर,
पटीर की आड़ सों तीर लग्यो तिरि।
मो मन बावरो योंही हुत्यो,
अधरा-मधु पानकै मूढ़ छवयो फिरि।
दास मनै अब कैसे कढ़ै,
निज चाह सों ठोढ़ी की गाड़ पड़्यो गिरि ॥

भाल में बाम के ह्वै कै बली,
बिंधो बाँकी भुवैं बरुनीन में आइ कै।
ह्वै कै अचेत कपोलन छवै,
बिछुरे अधरा को सुधा पियो धाइ कै।
दास जू हास छटा मन चौकि,
घरीक लौ ठोढ़ी के बीच बिकाइ कै।
जाइ उरोज-सिरै चढ़ि कूद्यो,
गयो कटि सों त्रिवली मै नहाइ कै ॥

देखे दुरजन सग गुरुजन-संकनि सों,
हियो अकुलात दृग होत न तुखित हैं।
अनदेखे हू ते मुसुकानि बतरानि मृदु,
बानिए तिहारी दुखदानिविमुखित है।
दास धनि ते है जे वियोग ही मे दुख पावै,
देखे प्रान पीके होति जिय में सुखित है।
हमैं तो तिहारे नेह एकहू न सुख लाहु,
देखेहू दुखित अनदेखेहू दुखित हैं॥

अँखियाँ हमारी दईमारी सुधि-बुधि हारीं,
मोहू तै नियारी दास रहै सब काल में।
कौन गहै ज्ञाने काहि सोपत सयानै कौन,
लोक ओक जानै ये नही है निज हाल में।
प्रेम पगि रही महामोह मे उमगि रही,
ठीक ठगि रही लागे रही बनमाल में।
लाज को अचै कै कुल-धरम पचै कै,
बिथा-बन्धन सँचै कै भई मगन गोपाल मे॥

मिस सोइबो लाल को मानि सही,
हरुए उठि मौन महा धरिकै।
पट टारि रसीली निहारि रही,
मुख की रुचि को रुचि की करिकै।
पुलकावलि पेखि कपोलन मे,
खिसिआई लजाई मुरि अरिकै।
लखि प्यारे विनोद सो गोद गह्यो,
उमह्यो सुख-मोद हियो भरिकै॥

चंद में ओप अनूप बढ़े लगी,
रागन की उमड़ी अधिकाई।
सोती कलिन्दजा की कछु होति है,
कोकन के दरम्यान लखाई।

दास जू कैसी चमेली खिलै लगी,
फैली सुबासहु की रुचिराई।
खंजन कानन ओर चले,
अवलोकत ही हरि साँझ सोहाई॥

जेहि मोहिबे काज सिंगार सज्यो,
तेहि देखत मोह में आय गई।
न चितौनि चलाय सकी,
उनहीं की चितौनि के भाय अघाय गई।
बृषभानलली की दसा यह दास जू,
देत ठगौरी ठगाय गई।
बरसाने गई दधि बेचन को,
तहँ आपुहि आपु बिकाय गई॥

नैन बहै जल कज्जलसयुत
पी अधरामृत को अरुनाई।
दास गई सुधि-बुद्धि हरी,
लखि केसरिया पट सोभ सोहाई।
कौन अचम्भो कहूँ अनुरागी,
भयो हियरो जस उज्जलताई।
साँवरे रावरे नेह पगे ही,
परी तिय अंगन में पियराई॥

हुती बाग में लेत प्रसून · अली,
मनमोहनऊ तहँ आइ पर्‍यो।
मनभायी घरीक भयो पुनि गेह,
चवाइन में मन जाइ पर्‍यो।
द्रुत दोरि गई गृह दास,
तहाँ न बनाइबे नेकु उपाय पर्‍यो।
धक स्वेद उसास खरोटन को,
कछु भेद न काहू लखाइ पर्‍यो॥

जात ही जौ गोकुल गोपाल हू पै जैयो नेकु,
आपनी जो चेरी मोहि जानती तू सही है।
पाय परि आपुही सी बूझियो कुशल-छेम,
मो पै निज ओर ते न जात कछु कही है।
दासजू वसन्त हू के आगमन आयो तौ न,
तिनसो सँदेसन्ह की बात कहा रही है।
एतो सखी कीबी यह अम्ब-बौर दीबी,
अरु कहिबी वा अमरैया राम राम कही है॥

तेरी खीझबे की रुचि रीझ मनमोहन की,
यातै वहै स्वाँग सजि-सजि नित आवते।
आपुही तै कुकुम की छाप नखछत गात,
अजन अधर भाल जावक लगावते।
ज्यो ज्यो तै अयानी अनखानी दरसावै त्यो त्यो।
स्याम कृत आपने लहे को सुख पावते।
उन्हे खिसिआवै दास हास जो सुनावै तुम्है,
वाहू मन-भावते हमारे मन भावते॥

लाल ये लोचन काहे प्रिया है,
दिये ह्वै है मोहन-रग मजीठी।
मोते उठी है जु बैठी अरौनि की,
सीठी क्यो बोलै मिलाइ ल्यौ मीठी।
चूकि कहौ किमि चूकति सो,
जिन्हे लागी रहै उपदेस बसीठी।
झूठी सबै तुम साँचे लला,
यह झूठी तिहारेउ पाग की चीठी॥

लाहु कहा कर बेंदी दिये,
औ कहा है तरौना के बाहु गड़ाये।
कंकन पीठि हिये ससिरेख की,
बात बने वलि मोहि बताये॥

दास कहा गुन ओठ मैं अंजन,
भाल में जावक-लीक लगाये।
कान्ह सुभायही बूझत हौ मैं,
कहा फल नैनन्ह पान खवाये ॥

फूलन के सँग फूलि है रोम,
परागन के सँग लाज उड़ाइहै।
पल्लव-पुज के संग अली,
हियरो अनुराग के रंग रँगाइ है।
आयो बसन्त न कंत हितू,
अब बीर बदोगी जो धीर धराइहै।
साथ तरून के पातन के,
तरुनीन को कोप निपात ह्वै जाइहै ॥

तेरे हास बेसन ज्यों सुन्दर सुकेसन लौ,
झीनि छबि लीन्ही दास चपला घनन की।
जानि कै कलापी की कुचाली ते मिलापी मोहि,
लागे बैर लेन क्रोध मेटन मनन की।
कहियो सँदेसो चन्द्रबदनी सों चद्रावलि,
अजहूँ मिलै तौ बात जानिये बनन की।
तो बिनु बिलोके खीन बलहीन साजै सब,
बरषा समाजै ये इलाजै मो हनन की ॥

अबतो बिहारी के वे बानक गये री,
तेरी तनदुति केसरि को नैन कसमीर भो।
श्रौन तुव बानो स्वातिबुन्दन को चातक मो,
स्वासन को मारिबो द्रुपदजा को चीर भो।
हिय को हरष मरु-धरनि को नीर भो री,
जियरो मदन-तीर-गन को तुनीर भो।
एरी बेगि करिकै मिलाप थिर थापु नतु,
आप अब चाहत अतन को सरीर भो ॥

काहू कह्यो आय कंसराय के मिलाइवे को ,
लेन आयो कान्ह कोऊ मथुरा अलंग तें ,
त्योही कह्यो आली सो तो गयो वह अब, देव ,
मिलै हम कहाँ ऐसो मूढ़ विन ढग तें ।
दास कहै ता समै सोहागिन को कर भयो ,
वलयाविगत दुहुँ बातन प्रसंग तें ।
आधिक ढरकि गई विरह की क्षामता तें ,
आधिक तरिक गई आनँद-उमंग तें ॥

जानि-जानि आयो प्यारो प्रीतम विहार-भूमि ,
मानि मानि मगल सिंगारन सिंगारती ।
दास दृग-तोरन को द्वारन मैं तानि-तानि ,
छानि-छानि फूले-फूले सेजहि सँवारती ।
ध्यान ही में आनि-आनि पीको गहि पानि-पानि ,
ऐचि पट तानि-तानि मैद-मद गारती ।
प्रेम-गुन गानि-गानि अमृतन सानि-सानि ,
बानि-बानि खानि-खानि बैनन बिचारती ॥

—:००:—

तोष

(सुधानिधि)

नैननि ह्वै श्रुतिकुंडल छवै,
कलकठनि ह्वै भुज-मूलनि धावत।
गुंज की माल ते, काछनी ते,
कहि तोष सुपायन में सुख पावत।
मो मन मोहन के तन मैं,
मन मैं मिनतान की फेरी लगावत।
पावरी ते चढ़ि पाग लों जात,
औ पाग ते पावरी लो फिरि आवत।

ते धनि तोष जो मोहन को,
सरबंग धरैं धरि धीर लोगाई।
मैं नख ते सिखलौं भरि साध,
कबौं इनते सखि देख न पाई।
जोनहिं अंग परैं पहिले।
नरैं ट तिनसों अँखियाँ दुख हाई।
जवि [illegible] तकी लगि जाति,
[illegible]ऊ अँखियाँ थकि जाति बनाई॥

द्वै पग देत अमन्द भई,
गति मन्द गयन्द की होति है पाछै।
बैननि में रस च्वै निकसै,
कहि तोष हँसे मुसकाहट काछै।
दीपति देह मनोज कियो,
गुझनौट को दीप ज्यौ राजस आछै।
ज्यौ ज्यौं लखै हरिनाक्षन ते तिय,
त्यौं त्यौ खरी तिरछाति कटाछै॥

लोचन लोल लसै अँसुवाकन,
जाइ सो धाइ सौ जाइ पुकारे।
या रतिया ते भई छतिया मँह,
पीर नहीं, पै लगे अति भारे।
ऊतर ताहि दियो कहि तोष,
सो बाजि उठ्यौ मनमोद नगारे।
तूँ जनि नेकु डेराइ इन्हैं,
बलि पीर सहैगे विलोकनवारे॥

लाज बिलोकन देति नहीं,
रतिराज बिलोकनहीं की दई मति।
लाज कहै मिलिये न कबौं,
रतिराज कहै हित सों मिलिये पति।
लाजहूँ की रतिराजहुँ की कहि,
तोष नही कहि जाति कछू गति।
लाल तिहारिये सौह कहौ,
वह बाल भई है दुराज की रैयति॥

मोर गहैं अलकैं अहि के भ्रम,
बोलत कोकिल सोर मचावै।
नाक ते कीर कुरार करै
कहि तोष छपाइ के मोहि छपावैं।

खेलत जा बनकुंजनि को हरि
घेरि हमै खग-पुंज खिझावैं ।
मोती की माल मराल चुगैं,
मुखचन्द को चोंच चकोर चलावै ।।

आनन पेखि कलंकित भो ससि,
मो दृग देखि मृगी बन लीनी ।
कोकिल स्याम भये बतिया सुनि,
बेनी चितै बिष ब्यालिनी भीनी ।
कुन्दनऊ दुति देखि तजै,
उर लागति तोष दया परबीनी ।
हौ पछिताति हहा सजनी,
रचि मोहि कहा बिधि पापिनि कीनी ।।

जाइ तमाल लतानि के अन्तर
पीहित चंचल कै दृग फेरे ।
जैसी भई कहि तोष महा छबि,
तैसी कहा उपमा कवि हेरे ।
खंजन मीन मृगा से कहूँ,
कहुँ कंजन भौंर चकोर सँघेरे ।
एक ते होत अनेक भटू,
करैं केते सरूप बिलोचन तेरे ।।

घाँघरो सिरिफ मुसुरूको सो हरित रंग,
अँगियाँ उरोज ओज हीरन के हार को ।
सिर सो अन्हाइ छबि छाइ ठाढी चौकी पर,
चेत ना रहत चितवत नोखीदार को ।
कबि तोष कहै मुख मोरति मुरूकि नेकु,
प्यारी चित चोरति निचोरति है बार को ।
जान्यौ प्रेम ससि को प्रकार करि तोर्यो बैर,
मानी कंज पकरि मरोर्यौ अंधकार को ।।

हीरा है दसन अरु विद्रुम अधर तेरे,
नख मनि जाहिर गुपुति क्यों करति ना।
कहै कवितोष कलधौत के कलस कुच,
हाथ पाँव लाल सों छपाइ क्यों धरति ना।
गनति न काहू कूर के गरूर दौलति को,
तौलों है कुसल जौलो पाले तूँ परति ना।
एतो धन लीन्हें काहे गाफिल फिरत दौरी,
करति कहा रे कारे चोर सों डरति ना॥

मोह न पाइ सकै सुरराज सु,
है रतिराज कला में जसी तूँ।
क्यो करि जान्यौ मिलैगी हमै,
कहि तोष सक्यौ करि प्रेम रसी तूँ।
मोहि परी मिलिबे की प्रतीति,
वही दिन ते मन माँह वसी तूँ।
सील सो गीली परी अँखियाँ
लखि ढीली चितौनि चितै कै हँसी तूँ॥

चोप की चतुरता की चातुरि चितौनि ताकी
रीझिवे रिझाइबे की रुचि जो चहत है।
बैयनि की नैयन की सैनि की की सुसीलता की,
भूषन सिंगार अंग-अंग जो गहत है।
कहै कवि तोष मन ती को तोष पावे सुनि,
पीकी बैन रैनि दिन सखियाँ कहत है।
प्यारी निज श्रौननि को नैन करि मान्यौ,
मानो प्यारे को स्वरूप सदा देखत रहत है॥

कान्हर की छवि देखिबे को,
यह गोपकुमारि महाछबि आई।
सीस धरे मटुकी लट छूटी,
छजै दधि बैचन के मिसि आई।

नन्दलला को लख्यो कहि तोष,
हिये उनमाद दसा अधिकाई।
भूलि गयो दधि नाम सो बामहि,
लेहु रे लेहु रे माई कन्हाई॥

ये अहीरबारे तोसों जोरि कर कोरि कोरि,
बिनय सुनाऊँ बलि बाँसुरी बजावै जिनि।
बाँसुरी बजावै तो बजावै मो बलाइ जानै,
बड़े बड़े नैननि ते मोहि टक लावै जिनि।
लावै है तो लाउ टक तोष मोसो काज कहा,
परिनाम मेरी पोरि दौरि दौरि आवै जिनि।
आवै है तो आउ हम आइबो कबूलै,
पर मेरे गोरे गात मैं असित गात लावै जिनि॥

ठोंकत को पट? हौ घनस्याम,
तौ दामिनि कौ तुम जाइ निहारो।
आली, हूँ मैं बनमाली, खरे
कहुँ बेचिये फूलन को रचि हारो।
बंसीधरे हम, तो झख मारिये,
हौ हरि, तौ बन कुंज सिधारो।
खोलहि देहु खिझावत क्यौ
कहि तोष मै कान्हर दास तिहारो॥

बारक श्रीवृषभान-बधू,
गहि कान को माखन चोर कै ल्याई।
आँसुनि पौछि कह्यो जसुदा,
तुम केतौ लियौ जननी बलि जाई।
दौरि गह्यो कुच राधिका को,
इतनोई लियो हम नन्द दोहाई।
गोपिन के उर आनन में,
सुख हास भरो हरि की लरिकाई॥

साँकरी गैल अचानक राधिका,
पाय भयौ मनमोद अनूठौ।
हा हा कै आँगुरी दन्तनि दै,
तब राधे कही हरि को कछू झूठौ।
पीछे जसोमति आवति है,
कहि तोप तबै हरि जू डरि ऊठौ।
ऐसे उपाइ गई निबुकाइ,
चितै मुसकाइ दिखाइ अंगूठो॥

काम-कला करि भाँति भली,
पिछिली निसि आइ गई अलसाई।
जानु सो जानु भुजानि भुजानि सो,
औ अधरा अधराहि मिलाई।
अंक भरे कहि तोष दोऊ,
परजंक मे पौढ़ि रहे छवि छाई।
सोवै सनेह-सने सुख सों,
जनु साँचो सिंगार औ सुन्दरताई॥

तोरि डारै हार कुच वौरि डारै सुख-सिंधु,
छोर घुँघरीयौ चीर कवधौ हरत पी।
रद-छद अधर कपोलनि मैं, नैन पीक,
उरज करज लीक कवधौ हरत पी।
तेरी आनि जानती जो तोप तौ बरजती मैं,
जानती हौ मेरी कही प्रान में धरत पी।
तब लों तौ तन की रहति सुधि संग मोहि,
जब लौं प्रजक मैं न अक मे भरत पी॥

एक समै हरि राधे खरे,
कर काँधे दुहूनि के दोऊ धरे है।
जोहि मुखै लखै आरसी लै,
हिय मैं सुख तोष अनोखो भरे हैं।

आपनी छाँह को आन ती जानि,
कियो जिय नाह सो मान खरे हैं।
बाल की बंक भई भृकुटी,
औ बिसाल बिलोचन लाल करे हैं।

छूटि छूटि छटा त्यौंही झूमि झूमि घटा त्यौंही,
त्रिबिधि बयारि हारी करिकै सहाय सो।
कहै कवि तोष त्यौही केकिन की केका,
कल-कंठनि की कूजै चहुँधा ते रही छाय सो।
हौंहूँ कहि कहि थाकी काम केलि की कथानि,
पाहन से कठिन न केहूँ पघिलाय सो।
मारि मारि बान पंचबान हू बिलान्यौ मूढ,
मान अड़ि रह्यो प्रान अंगद के पाय सो॥

जोन्ह ते खाली छपाकर भो,
छन मैं छनदा अब चाहति चाली।
कूजि उठे चटकाली चहूँ दिसि,
फैलि गई नभ ऊपर लाली।
साली मनोज बिथा उरमैं,
निपटै निठुराई धरे बनमाली।
आली कहा कहिये कहि तोष,
कहूँ पिय प्रीति नई प्रतिपाली॥

मेरियो लाल भई अँखियाँ,
अँखियाँ लखि रावरी जावक जानो।
मेरे बियोग जगे कहूँ रैनि सु,
हौंहूँ कियो निसि जागि बिहानो।
है हम तो तुम एकई प्रान,
रच्यौ बिधि द्वै तन साँचु मै मानो।
रावरे के हिय हार गड़्यौ,
लखि साँवरे जू हिय मेरो पिरानो॥

फूल गुलाब से फूलि रहे,
दृग किंसुक से अधरा अधकारे।
झारिकै लाज पतीवन की,
किसलै-सम जावक है अरुनारे।
तोष लसै मृग के मद की तन,
लीक अली अवली मतवारे।
मोद अनन्त भयो उर अन्तर,
आये बसन्त ह्वै कन्त हमारे॥

पैजनी गढ़ाइ चोंच सोन मैं मढ़ाइ देहौ,
कर पर लाइ पर रुचि सो सुधरिहौं।
कहै कवि तोष छिन अटक न लैहौं कवौं,
कंचन कटोरे अटा खीर भरि धरिहौं।
एरे कारे काग तेरे सगुन सँजोग आजु,
मेरे पति आवै तौ बचन ते न टरिहौं।
करती करार तीन पहिले करौगी सब,
आपने पिया को फिरि पीछे अंक भरिहौ॥

ज्यौं ज्यौ गरजत घन संपात जातै रैनि,
चंपाबरनी को लखि त्यों त्यौ लरजत हीउ।
ज्यौ ज्यौ चहुँ ओर घोर सोर मोर दादुर को,
पौन को झकोर जोर त्यौं त्यौ डरपत जीउ।
कहै तोष ज्यौ ज्यौ बारिधारा को निहारै दार,
मार के प्रकार ते पुकारती हेरायो सीउ।
ज्यौं ज्यौ पीउ-पीउ करै पातकी पपीहा त्यौ त्यौ,
तीय ताहि बूझति कितै है रे कितै हैं पीउ॥

तीखी सिखी सर-सी किरिचै करि,
मोहि हनै फिरि पै पछितैहै।
लालच जान अपान यहै,
यहि को मन आनि हमै मिल जैहै।

बंद करै कहि तोष महा,
मतिमंद रे चंद न देखन पैहै।
भो मन जो तन छोड़िहै तौ,
नँदनंद के आनन-चंद समै है ॥

पीवो करै दिन रैनि सुधाकर,
भूख तृषा न सताइ सकै जू।
अंक सो अंक लगाये रहै,
गुर लोग की संक न आइ सकै जू।
तोष कबौ तन न्यारोई होत,
नही ते कहूँ अब जाइ सकै जू।
साँचो सँयोग वियोगही मैं,
हम ऊधौ विभूति न लाइ सकै जू ॥

—:००:—

रघुनाथ

(काव्य-कलाधर)

गोरे है नन्द यशोमति गोरी है,
गोरे महा सब ते बलभाई।
साँवरे जो हरि है रघुनाथ सो,
क्यों यह बात भई है न पाई।
मूरति नैननि मे बृजबालनि,
बालक-वैस ते लैकै वसाई।
सग रहेते लगी झलकै,
पुतरीन के रंग की अंग लोनाई॥

कौतुक है एक चलै तोहूँ तौ देखाऊँ तोहि,
आवति हौं देव अबै देखिबो को दाँवरी।
सौह कीन्हे कहति हौ समै ना मिलैगो फेरि,
बिन्द्राबन बसि बरसन दीन्हे भाँवरी।
कदम की छाँही दोऊ दीन्हे गलबाहीं खड़े,
यमुना मै फूलत सरोज जेहि ठाँवरी।
भाषत हैं ऐसे बृजबोग्रा एहो रघुनाथ,
आधे हरि गोरे आप आधी राधा साँवरी॥

मेघ जहाँ तहाँ दामिनि है,
अरु दीप जहाँ तहाँ जोति है भाते।
केश जहाँ तहाँ माँग सुवेश है,
है गिरि गेरु तहाँ रँगराते।
मोहन सों मिलिबे को बलाइ ल्यौ,
मैं रघुनाथ कहौं हठ याते।
होत नयो नहि, आयो चल्यो,
रँग साँवरे गोरे को संग सदा ते॥

हार सँवारि अनेकन फूल के,
ल्याइ लै मालिनि भौन भरे में।
काहू कों 'श्वैत दियो वहि,
काहूको पीरो दियो रघुनाथ अरे में।
नीरज नील कों लै कर में कही,
राधे सों यौं चतुराइ भरे में।
लीजिये हेत तिहारे में ल्याई हौं,
या रंग को लगै प्यारो गरे में॥

पायी ही जावक एक मैं दैन,
सो आइ गये रघुनाथ सुभाइनि।
बेगि दुरी, जब जात रहे,
तब आइकै बैठी दवैबे कों चाइनि।
दीन्है है कौन मै दीबेहै कौन-सौ,
देख्यो की देखि जकी यह नाइनि।
बोझिल सो यह पाँउ लगै,
तब यों मुसक्याइ कहो ठकुराइनि॥

आपने हाथनि सौं करतार,
करे अतिही जग बीच उज्यारे।
देखत ही रहिअै रघुनाथ,
जुदे नहि कीजै लगै अति प्यारे।
सौरभ सों परिपूरण पुष्ट,
पवित्र भरे रस आनँद धारे।
वारि विना उपजे अति सुन्दर,
प्यारी के लोचन-वारिज न्यारे॥

फरकन लागी आँखि ढरकन कानन लौं
हरकन लागी लाज पलकै सुधैनी की।
भार लाग्यो परन उरोजनि मे रघुनाथ,
राजी रोमराजी भाँति कल अलिसैनी की।

कटि लागी घटन, पटन लागी मुख सोभा,
अटन सुवास आसपास स्वास पैनी की।
अंगनि में दुति चारु सोने की जगन लागी,
एड़िन लगन लागी बैनी मृगनयनी की॥

अलकै विसाल ह्वै कै वक लहरान लागी,
लक तै परान लागी दुतियन चाल की।
लाली महरेटी के अधर सरसान लागी,
अधरन वान लागी बतियाँ रसाल की।
रघुनाथ छाती कुच रुचि दरसान लागी,
छाती छहरान लागी छवि मनि माल की।
रीझि अँखियान लागी आँखे वढि कान लागी,
कानन सोहान लागी चरचा गोपाल की॥

देखि री देखि ये ग्वालि गँवारिन,
नैंक नही थिरता गहती है।
आनँद सो रघुनाथ पगी,
पग रगन सों फिरती रहती है।
छोर सौं छोर तरौना को छ्वै करि,
ऐसी बड़ी छवि कौ लहती है।
जोवन आइवे की महिमा,
अँखिया मनो कानन सौं कहती है॥

आजु हरि पकरि कदम की ललित डार,
खड़े यमुना पै कलानिधि ऐसे वै रहे।
रघुनाथ न्हाइवे को अलिन के साथ आई,
वृषभान-लली पंथ सौरभ सौं म्वै रहे।
देखा-देखी होत भयो कौतुक उदोत भटू,
राधे के नयन के ऐसी भाँति घरी ह्वै रहे।
कंजन से ह्वै कै फेरि खंजन से ह्वै के,
फेरि मीन ऐसे ह्वै कै री चकोर ऐसे ह्वै रहे॥

नित बोल अमीरस पान करै,
यह कान की बान दुझावे री को।
शुभ अंग सुगंध जो सूँघति नाक,
सो सूँघनि ऐसे बुझावे री को।
रघुनाथ लग्यो मन पाइनि रीझि,
उचाटन खीझि सुझावे री को।
अनियारी गोपाल की आँखिन ते,
उरझी अखियाँ सुरझावे री को॥

मैं तुम सों कहै राखति हौ
रघुनाथ लखो हित के अवगाहे।
प्यारी अनूप दसा तन की,
भई है अति नेह को पथ निबाहे।
देखत हीं उठि ठाढ़े भये,
बलि मो सों दुरावति हौ अब काहे।
लागन को पिय के हिय सौ
पहले तन ते इन रोमन चाहे॥

जहाँ जहाँ सुनै तहाँ तहाँ को पठावै मोहि,
देखि आई अब धौ सो रूप कैसौ धरे है।
देखि आई जहाँ तही फूलि-फूलि भूलि-भूलि,
बूझति बनक ऐसे नित नेम करे है।
कहा कहौं तोहि कहि आई जो तूँ हरि कथा,
रघुनाथ मोहि ये अँदेसे आनि अरे है।
आँखिन परेगे आनि जौ तौ कौन दसा ह्वै है,
कान परे प्राण राखिबे के लाले परे है॥

जो सुनि कै धुनि ऐसी भई,
तौ तू काहे को और उपाइ को धावै।
मैं कहौ जो करि सो, रघुनाथ की सौह,
तिया यह तू सुख पावै।

साँप डसे मैं जो फेरि डसे,
उतरे विष प्रान शरीर में आवै।
तातै सखी कहि मोहन सों,
ओहि टेर सों बाँसुरी फेर बजावै॥

हो अभिलाष भरो अति ही,
नित चाहे सनाथ भयो तनको थ्वै।
आनि मिल्यो बड भागनि सों,
रघुनाथ समै सोइ आनँद को छ्वै।
हेरत ही हरि को उमग्यो,
गति पारद की भई रोमनि को म्वैं।
नेह भटू जिय के मन को,
झलको हिय पै जल को किनको ह्वै॥

मणिमय भूषण पहिरि नख-सिख प्यारी,
बैठी पीठि पाछै आसरो कै परयक को।
कहै रघुनाथ पिय प्यारे की बिलोके गैल,
ही मै कछू-कछू ऐल सौतिहि के सक को।
तानिबे को निशि दिशि ऊरध को देख्यो ज्योंहि,
त्योंहि फैल्यो आनन प्रकाश ऐसे अङ्क को।
भौर लौ उड़त तब रहिगो कलक बाकी,
छपि गयो व्योम बीच मडल मयक को।

सौरभ सकल डारि सुमन सों गूँदे बार,
भूषण मनिन बार माँग मुकुतामई।
हीरन के हीरे हार चन्दन चढ़ाये चारु,
सुर-सरि ता को धार सुरसरिता रई।
रघुनाथ पियबस करिबे चली है बाल,
मुख की मरीची-जाल दिसि मढ़ि कै लई।
चाव चढ़े चखनि चकोरन के चकाचौधी,
चंद गयो चढ़ि चटकीली चाँदनी भई॥

सरद की राका राति राधे को बोलायो माधौ,
देखिके वो सुख सखी पाइ नीकी रिधि को।
एहो रघुनाथ कहा रुचि की निकाई कहौ,
हाथ लागै मेरे तौ हौ चूबों हाथ बिधि को।
घूँघट खुलत मुखजोति को पसार होत,
ह्वै गयो छपाव सब बैगुन समिधि को।
म्रगमद-अक लग्यो जितनो हो भाल,
एक रहि गयो तितनो कलक कलानिधि को॥

चंद सो आनन चाँदनी सो पट,
तारे सी मोती की माल बिभाति सी।
आँखे कुमोदिनि सी हुलसी,
मनिदीपनि दीपकदानि के जाति सी।
हे रघुनाथ कहा कहिये,
पिय की तिय पूरन पुन्य बिसाति सी।
आयी जोन्हाइ के देखिबे को,
बनि पून्यो की राति मै पून्यो की राति सी॥

देखिबे को द्युति पून्यो के चद्रकी,
हे रघुनाथ श्रीराधिका रानी।
आई बोलाइ के चोंतरा ऊपर
ठाढ़ी भई, सुख सौरभ-सानी।
ऐसी गई मिलि जोन्ह की जोति मै,
रूप की रासि न जाति बखानी।
बारन ते कछू भौंहन ते कछू,
नैनन की छबि ते पहिचानी॥

मृगमद लाय मृगमद रग अग कीन्हे,
ढाँपि नख-सिख दीन्हे सारी श्याम भाँति है।
इदीबर कमल के दलकी गरे मे माल,
पहिरे बिसाल ना बनक कही जात है।

केश बगराय लीन्हे आनन छपाय,
मति कोई लखि जाय रघुनाथ यो सकाति है।
भावते सो मिलिबे को ऐसे वनि चली प्यारी,
मानो देह धारी भारी भादँवकी राति है॥

रैन चैन लहत में महत विनोदपागे,
रघुनाथ दपति ए रहे सूम भरिकै।
जागे बहु दिनके औसरके हूँ वीते पै ये,
सोये नहि वाकी राति गई जव ढरिकै।
यह जौ बूझति हौ सो ताको यह हेतु सुनो,
निहचै हिये मै पूरि दूरि भ्रम करिकै।
भावती की सखी नीद लाज पाइ द्वारि गई,
भावते की नीद गई सौति भाव धरिकै।

भोर उठी अँगिरात जँभात,
सदी जलतै भरि भाजन आनो।
धोवन लागी तिया मुख-मडल,
देखि हियो रघुनाथ लोभानो।
मीजत आँखि लसी अँगुरी,
सम आरसी के उपमा यह जानो।
कंजन के दल सौ निसि-रंजन,
खजन के पर पोंछत मानो॥

मान सुनि भावती को तुम जो मनाइबे को,
आये प्यारे रघुनाथ जीमै आपु तरसे।
सो सब सहज ही मै बनि आयो वलि गई,
चलिकै मनाइ लीजै बिना पाँइ परसे।
आवती हौ उतही सों उनकी बिलोकि दसा,
बिरह तिहारे अङ्ग-अङ्ग सब झरसे।
चातिक के बैन सुनै बैन भये चातिक से,
देखि जलधर भये नैन जलधर से॥

प्यारो बिदेस चल्यो हठ कै,
सबसों तजि मोह-महातम ही को।
हे रघुनाथ भरी दुख सोचति,
एते में काहू अचानक छींको॥
का मैं कहौ धुनि सौ सुनिकै,
सुख सों भयो शोभित यों मुख तीको।
कैतो रह्यो अति फीको भटू,
भयो कैतो उदैत मयक तैवां नीको॥

आये कहूँ रतिमानि लख्यौ,
तियके अँसुवान की धार चली द्वै।
देखि कह्यो रघुनाथ कहो तो,
कही सकुचै इमि चातुरता छ्वै।
रावरे को मुख-चंद चितै,
ए कुमोदिन आखै अनंद महा म्वै।
ही में न बन्द सकी करि, फूलते
ऊपर द्वै मकरद चलै च्वै॥

साँझ ही सों खेलन रसिक रसभीने फागु,
भर्‌यो अनुराग गावै रीझि-रीझि पगि-पगि।
केसरि गुलाल सो लपटि रह्यो रघुनाथ,
रूप की ठगोगी निज डारि-डारि ठगि-ठगि।
भोडर के किनका ये लाल के बदन पर,
निरखि जोन्हाई बीच ऐसे लसै जगि-जगि।
मानो फूलो बारिज बिलोकि कलानिधि आली,
किरनै चलाई ते लोनाई रही लग-लगि॥

फागु मचो बरसाने की बागमें,
पूरि रह्यो थल तान तरग सों।
गोप-बधू इत, ठाढ़ो गोपाल उतै,
रघुनाथ बढे सब संग सों।

घूँघट टारि सखीन की ओट ह्वै ,
प्यारी चलाई ज्यों प्रेम उमंग सों ।
लागी तौ मूठि अबीर की आइ पै ,
प्यारो अन्हाइ गयो ओहि रंग सो ॥

खेलत फागु सोहाग भरी ,
व्रषभान-लली भली भाँति उमंग सों ।
घूँघट ओट किये रघुनाथ ,
गई हरि पै सखि छूटि कै संग सों ।
चौंकि तिरीछे चित्तै मुसक्याइ ,
फिरी पिचकारी लगाइ के अंग सों ।
रीझि रहे वह भाव चितै ,
अरु भीजि रहे वा रँगीली के रंग सों ॥

—:oo:—

दूलह

सारी की सरौंटैं सब सारी में मिलाय दीन्हीं,
भूषन की जेब जैसे जेब जहियत है।
कहै कबि दूलह छिपाव रद-छद मुख—
नेह देखे सौतिन की देह दहियत है।
बाला चित्रसाला तें निकरि गुरुजन आगे,
कान्हीं चतुराई सो लखाई लहियत है।
सारिका पुकारें 'हम नाही हम नाही', एजू—
'राम राम' कहो 'नाहीं' नाहीं कहियत है॥

धरी जब बाही तब करी तुम नाही,
पाँइ दियौ पलिकाही नाही नाही कै सुहाई हौ।
बोलत मै नाही पट खोलत मैं नाही,
कवि दूलह उछाही लाख भाँतिन लहाई हौ।
चुम्बन मैं नाही परिरम्भन मै नाही,
सब आसन-विलासन मै नाही ठीक ठाई हौ।
मेलि गलबाहीं केलि कीन्ही चित-चाही,
यह हाँ तै भली नाही सो कहाँ ते सीखि आई हौ॥

उरज उरज धँसे, बसे उर आड़े लसे,
बिन गुन माल गरे धरे छबि छाए हौ।
नैन कवि दूलह हैं राते, तुतराते बैन,
देखे सुने सुख के समूह सरसाए हौ।
जावक सौ लाल माल, पलकन पीक-लीक,
प्यारे ब्रजचद सुचि सूरज सुहाए हौ।
होत उरुनोद यहि कोद मति बसी आजु,
कौन उरबसी उरवसी करि आए हौ॥

बेनी प्रवीन

चंपक सो तनु नैन सरोज से,
इन्दु सो आनन जोति सवाई।
बिम्ब-से ओट लसै तिल फूल सी,
नासिका स्वास सुवास सुहाई।
बाँहैं मृनाल-सी बेनी प्रवीन,
उरोज उतंग नयी छवि छाई।
ज्यों ज्यों विलोकिये जू प्रति अंगन,
त्यों त्यों लगै अति सुन्दरताई॥

काल्हि ही गूंदी बबा की सौं मैं,
गजमोतिन की पहिरी अति आला।
आई कहाँ ते इहाँ पुपराग की,
संग यई जमुना तट बाला।
न्हात उतारि मैं बेनी प्रबीन,
हँसे सुनि बैननि नैन बिसाला।
जानति ना अँग की बदली,
सब सों बदली-बदली कहै माला॥

वहि अंगन माह सखी कोउ संग न,
खेलति जोवन जोति पसारे।
वह तो नवला कमला कै सुभाय,
उतै ते इतै करे कौतुक भारे।
उतसाह भरी उचकै अचकै गहकै,
भुज बेनी प्रवीन निहारे।
कर-कंजन ते गिरि कन्दुक सो,
दृग-खंजनि ते अँसुवा भरि ढारे॥

न्हात सरोवर पंकज पेखि,
भई पिय के मुख की निसि की सुधि।
सोहै चहूँ दिसि में अवली,
अबलोकति मालनि मै जु रही रुध।
चूमिबे को चित चाह सों बेनी प्रवीन,
उमाह भरी उमगी बुधि।
जात बने न तितै कँपे गात,
इतै पर नैननि लाज रही गुधि॥

बैठी तिया गुरु नारिन मै,
रति ते रमनीय स्वरूप सोहाई।
आयो तहाँ मनमोहन त्यों,
सबकी अँखियान महा छवि छाई।
कैसे लखे पिय बेनी प्रवीन,
नवीन सनेह सकोच सवाई।
पीठि दै मानते को सजनी,
सजनीन को डीठि मै डीठि लगाई॥

खेलिबे के मिस सखी केलिके सदन लैके,
नवलबधू को चली सुगति करिंद है।
बोलति हँसति मृगनैनी पिकबैनी तहाँ,
देख्यो ना प्रवीन बेनी जदुकुल चंद है।
चुपि रही चहुँधा चितै कै चकई सी चकी,
नैनन मे झलक अचल जल-बिंद है।
छकित थकित मानौ कमल के ऊपर ह्वै,
मुख-मकरद आली अबली अलिंद है॥

बैठी यह सोच करि सुन्दरि सकोच भरि,
कैसे कै बिलोकौ हरि करों कौन छलछन्द।
दूबरी गई ह्वै देह कल न परत गेह,
सहित सनेह तौ लौं बोली यों जेठानी-नंद।

आजु दधि बेचन तू जाइ नंदगाउँ मधि,
सुनत प्रवीन बेनी उमगो अनंदकंद।
कसि आई कंचुकी उकसि आये दोउ कुच,
गसि आई बलया सो फँसि आये भुजबंद॥

भृकुटी धनु बेसरि मोर मनौ,
मनि मानिक इंद्रवधू-जितु है।
दुति दामिनि कोर हरी बन-बेलि,
घटाघन घूँघट सो हितु है।
उमगो रस बेनीप्रवीन रसाल,
भ्रमो अब चाजक सों चितु है।
हित रावरे नौलकिसोर लला,
अबला भई पावस की रितु है॥

सकल सिंगार साजि राजिकै प्रवीन बेनी,
आगमन जानि पिय प्रेम-प्रति-पालिका।
दमकत रदन मदन की उमंग अंग,
केलि के सदन बैठी बदन-बिलासिका।
नग जगमगत जगत जोति जोबन की,
सारी जरतारी अंग कैसी सग आलिका।
झलक मलक झलकति झाँई झाँझरीन,
मानौ मनिमहल समानी दीप-मालिका॥

ठाढ़े भये आनि ढिग बिहँस प्रवीन बेनी,
देखिबे को आतुर बदन नँदलाल है।
कीन्हे मनुहारि मुरि पीतम त्यों बीरी जब
दैन लागी लाजन लपेटी बर बाल है।
डोरिया की चादरि सौ झाँपिति पहूँचन लौ,
ऐसी ततकाल कर कंपति बिसाल है।
नीर की लहरि मानौ थहरि छहरि रही,
लागत समीर बीच कमल सनाल है॥

आई रति मंदिर ते रति ले रसीली अति,
रति ते रसीली अति उपमा अपग है।
मन्द - मन्द गति मैं मरू कै मग पग परै,
उमँगी प्रवीन बेनी उर में उमंग है।
कम्पत रदन छवि बदन कढै न बैन,
मदन छकाई छाई छवि की उतंग है।
सारी जरतारी मृगमदज अतर बूड़ी,
पीक बूडी पलकै प्रसेद बूड़े अंग है॥

रूठिकै सोइ रहे अँगना पिय,
चौपारि चूकि तिया गहरानी।
सावत बन्दन बेंदी दई गुँदि,
बेनी प्रवीन सखी बहरानी।
भोरही आये उठे अलसात वै,
आरसी सामुहै लै ठहरानी।
कान्ह कछू सकुचे मुसकाय,
हँसी लखि मदिर में महरानी॥

घेरी अँघेरी घनी बदरी अब,
आवन चाहत है अति पानी।
पौन की ऐसी झकोर चली मग,
ह्वै है रहे कहुँ छप्पर छानी।
प्रान लै धाई निकुज, अली,
तैं भली भई आइ गई सुखदानी।
बेलि के धोखे गह्यो इन मोहिं,
तमाल के धोखे इन्है लपटानी॥

तन की सुबासु बासु बहति समीर तहाँ,
अलिन की भीर न अलक छवि ह्वै रही।
नये नये नीके लगे किसलै लगन आली,
पगन की लाली द्रुमजालिन सम्वै रही।

सुधा सुध सीची मुखचन्दकी मरीचिनते,
बीथिन प्रवीन बेनी चाँदनीसी ह्वै रही।
उमँगे अनग मन कन्त को मिलन जाति,
आगे आगे बन में बसन्त - रितु ह्वै रही।।

गेह ते सनेह में सिधारी स्याम सारी सजि,
रजनि अँधेरी न सजनि कोऊ साथ मैं।
बैठी जाइ सुन्दरि सहेट पिय भेट हेत,
मदन अनूप सर लीन्हें जहाँ हाथ मै।
बहति समीर सीर सुरभि प्रवीन बेनी,
यह मृगनैनी की कहाँ लौ कहौ गाथ मैं।
तनु तिन कुजनि मै द्रग मग-पु जनि मै,
मनु गल - गु जनि मै प्रान प्राननाथ मैं।

काहू रूपवती मै रमे है लोभी लालची है,
ललकत डोलै बोलै तजत सुभाये ना।
कहूँ सग सखनि मै रग मड़ि रहे कैधौ,
कैधौ उर उमडि अनग-बान लाये ना।
कौन असमजस प्रवीन बेनी याते और,
भोर होत आली नभलाली तैं बताये ना।
अथवत इन्दु अरविंद बन विकसत,
गु जत मलिद है गोविंद गेह आये ना।।

भोर ही न्यौति गई ती तुम्हें वह,
गोकुल गाँउ की ग्वालिनि गोरी।
आधिक राति लौ बेनी प्रवीन,
कहा ढिग राखि कियो बरजोरी।
आवै हँसी हमै देखत लालन,
भाल में दीन्ही महावर घोरी।
एते बड़े ब्रज म डल मैं न,
मिली कहूँ मागे हू रंचक रोरी।।

मालिन ह्वै हरवा गुहि देत,
चुरी पहिरावैं बने चुरि हेरी।
नायिनि ह्वै कै निखारत केस,
हमेस करै बनि जोगिनि फेरी।
बेनी प्रवीन बनाइ बिरी,
बरईनि वने रहै राधिका केरी।
नन्दकिसोर सदा वृषभान की,
पौरि पैं ठाढ़े बिकैं बने चेरी॥

—:oo:—

बोधा

(इश्कनामा)

अति छीन मृनाल के तारहू ते,
तेहि ऊपर पाँव दै आवनो है।
सुई वेह ते द्वार सकी न तहाँ,
परतीति को टाड़ो लदावनो है,
कवि बोधा अनी घनी नेजहू ँ ते,
चढि तापै न चित्त डरावनो है।
यह प्रेम को पन्थ कराल महा,
तरवार की धार पै धावनो है।

लोक की लाज औ सोच प्रलोक को,
वारिये प्रीति के ऊपर दोऊ।
गाँव को गेह को देह को नातो,
सनेह में हांतो करै पुनि सोऊ।
बोधा सुनीति निबाह करै,
धर ऊपर जाके नहीं सिर होऊ।
लोक की भीति डेरात जो मीत,
तो प्रीत के पैंड़े परै जनि कोऊ।।

यह प्रेम को पन्थ हलाहल है,
सु तो बेद पुरानउ गावत हैं।
पुनि आंखिन देखौ सरोजन लै,
नर संभु के सीस चढावत हैं।
बरही पर माथे चढै हरि के,
फल जोग ते एते न पावत हैं।
तुम्है नीकी लगै ना लगै तौ भले,
हम जान अजान जनावत हैं।

कबहूँ मिलिबो कवहूँ मिलिबो,
यह धीरज ही मैं धरैबो करै।
उर ते कढ़ि आवै गरै ते फिरै,
मन की मन ही मै सिरैबो करै।
कवि बोधा न चाउ सरी कबहूं,
नित ही हरवा सो हिरैबो करै।
सहते ही बनै कहते न बनै,
मन ही मन पीर पिरैबो करै॥

बोधा किसू सों कहा कहिये,
सो बिथा सुनि पूरि रहै अरगाइ कै।
याते भले मुख मौन धरै,
उपचार करै कहूँ औसर पाइ कै।
ऐसो न कोऊ मिल्यो कबहूँ,
जो कहै कछु रच दया उर लाइ कै।
आवतु है मुख लौं वढि कै,
फिरि पीर रहै या सरीर समाइ कै॥

दहिये विरहानल दाहन सों,
निज पापन तापन कों सहिये।
चहियै सुख तौलो रहै दुख कै,
दृग वारियै बोधन कै चहिये।
कवि बोधा इते पै हितू न मिलै,
मन की मन ही मै पचै रहिये।
गहिये मुख मौन भई सो भई,
अपनी करि काहू सों का कहिये॥

ऐसीय नाथ घरी वह कौन,
बजाइ कै बाँसुरी मोहन ही हरौं।
ता दिन ते हौ जकी सी थकी
चकचौधी फिरौ नहिं धीरज ही धरौ।

वाधा न मीत सों प्रीत सखी करि ,
लाज निगोडिनि बन्धन जी अरौ ।
प्रेम ते नेम कहा निबहै ,
अब तौ यह नेह निबाहिबे ही परौं ।।

छाड़ि सखीन की सीख सबै ,
कुलकानि निगोड़ी वहाइबेही है ।
ह्वै कै लटू लपटाइ हिए हरि ,
हाथ ते बसी छुटाइबेही है ।
बोधा जरैलनु के उपहास ,
अंगेजुकै कुंजनि जाइबेही है ।
लाज सो काज कहा बनिहै ,
ब्रजराज सों काज बनाइबेही है ।।

छुटि जाँइगे चेत के नेत सबै ,
जो कहूँ मुरली अधरा धरि है ।
मुसकाइ कै बोले तो बाट परै
नखहू शिख लौ विष सों भरिहै ।
कवि बोधा तिहारे सयान सबै ,
सु तौ सूधेई हेरनि मै हरि है ।
तुम्है भावते जानि मनै को करै ,
वह जादूगरी बजि कै करिहै ।।

कोटिक देखि फिरौ छवि मै ,
पै न कोऊ छवै सम वा छवि जूझै ।
आँखिन देखी जो वान तिन्है बिन ,
आँखिन सो नोजुवाँ हय बूझै ।
बोधा सुभान को आनन छोड़ि ,
न आनन मो मन आनि अरूझै ।
जैसे भये लखि सावन के अँधरे
नर को सु हरो हरो सूझै ।।

दूरि है मूरि अपूरब सो ससि,
सूरज हूँ कबहूँक निहारी।
आदर बेली नबेली अबै कहु,
कैसे मिलै बर जोग दिवारी।
बोधा सुनै हे सुभान हितू,
करि कोटि उपाइ थके उपचारी।
पीर हमारी दिलन्दर की
हम जानत है वह जाननहारी॥

बोधा सुभान हितू सों कही,
या दिलन्दर की को सही करि मानत।
ता मृगनैनी की चाह चितौनि
चुभी चित मैं चित सो पहिचानत।
तासों वियोग दई न दयौ तौ
कही अब कैसे मै धीरज आनत।
जानत है सबही समुझाइये,
भावती के गुन को नहि जानत॥

हार में प्यारो खरो कब को,
लखती हियरे सों लगाइ न लीजै।
तू तौ सयानी अनोखी करी,
अब फेरि कै ऐसी न चित्त धरीजै।
बोधा सोहाग औ सोभा सबै
उड़िजैबे के पन्थ पै पाँउ न दीजै।
मानि ले मेरी कही तू लली अहे,
नाह के नेह मथाह न कीजै॥

खरी सासु घरी न छमा करिहै,
निसिबासर त्रासन ही मरबी।
सदा भौहै चढाये रहै ननदी यों,
जेठानी की तीखी सुनै जरबी।

कवि बोधा न संग तिहारो चहैं,
यह नाहक नेह फँदा परबी।
बडी आँखैं तिहारी लगैं ये लला,
लगि जैहै कहूँ तो कहा करबी ॥

त्याग कों जोग जहान कहै,
हम तो तब हीं चुकी त्यागि जहानैं।
सौत कलेस को लेस नही,
कवि बोधा गोपाल मैं चित्त समानैं।
खैंचती पौन को मौन गहे,
अरु नीद अहार नहीं उर आनै।
ऊधो जू जोग की रीति कहो,
हम जोग ना दूजो वियोग ते जानै ॥

बिन स्वाद पुरानी लता सिगरी,
तिनहूँ मैं कछू गुन ज्ञान नतो।
लखि केतकी और नेवारी जुही,
मनमानै न सेवती बीच रतो।
कवि बोधा न प्रापति आदर को,
दरकार करी करि येक मतो।
यहि आसरे या बगिया बिलम्यौ,
वा चमेलो नबेली सौं नेह हतो ॥

बटपारन बैठि रसालन मै
यह क्वैलिया जाइ खरे ररि है।
बन फूलि है पुज पलासन के,
तिन को लखि धीरज को धरि है।
कवि बोधा मनोज के ओजनि सों,
बिरही तन तूल भयो जरि है।
घर कत नही बिरतन्त भटू,
अब कैधौ बसन्त कहा करि है ॥

ठाकुर

झूम देइ झूला मे झुलावतीं जसोदा माय,
चूम चूम बदन बलैया लेत प्यारे को।
झीनी सोहै झंगुली औ झालर झडूली लसै,
अँखियाँ रसीली नीकी कज सी सुखारे की।
ठाकुर कहत चित-चोर चितवन चारु,
रूप में मिलत त्यो किलोलैं किलकारे की।
कंजहू ते कोरी जिन्हें बदत महेस अज,
लागैं सबै पैया या गोविंद गभुवारे की॥

मेंहदी लपेटे लाल लाल बस कीन्हें निज,
छीगुनी अनौटा नगजटित सँवारे है।
दीपति के दीप तरवान को बखानैं कौन,
पाँचों अँगुरिन मैन सर पाँचौ पारे हैं।
ठाकुर कहत ठकुराई के निकेत,
रस-रूप के भँडार निरधार निरधारे है।
पंकज-बरण अशरण के शरण राधे,
रावरे चरण सुख-करन हमारे है॥

मोतिन कैसी मनोहर माल गुहै,
तुक अच्छर जोरि बनावै।
प्रेम को पथ कथा हरिनाम की,
बात अनूठी बनाइ सुनावै।
ठाकुर सो कवि भावत मोहिं जो,
राज राजसभा में बड़प्पन पावै।
पंडित लोक प्रवीनन को,
जोई चित्त हरै सो कवित्त कहावै॥

वा निरमोहिनि रूप की रासि,
जऊ उर हेतु न ठानति ह्वै है।
बार हूँ बार बिलोकि घरी घरी,
सूरत तो पहिचानति ह्वै है।
ठाकुर या मन की परतीत है,
जो पै सनेह न मानति ह्वै है।
आवत है नित मेरे लिये,
इतनो तो विशेष कै जानति ह्वै है॥

घरही घर घैरु करैं घरिहाइनै,
नाँव धरें सब गाँवरी री।
तब ढोल दै दै बदनाम कियौ,
अब कौन की लाज लजावरी री।
कवि ठाकुर नैन सो नैन लगे अब,
प्रेम सों क्यों न अघाँवरी री।
अब होन दै बीस बिसै री हँसी,
हिरदै बसी मूरति साँवरी री॥

जब तै दरसे मनमोहन जू,
तब तै अँखियाँ ये लगी सो लगीं।
कुलकानि गई भगि वाही घरी,
ब्रजराज के प्रेम पगी सो पगीं।

कबि ठाकुर नेह के नेजन की
उर मैं अनी आन खगीं सो खगीं ।
अब गाँव रे नाँव रे कोई धरौ,
हम साँवरे रंग रगीं सो रगीं ।।

ठाढ़े रहे घनश्याम उतै,
इत मै पुनि आनि अटा चढ़ि झाँकी ।
जानति हो तुम हू ब्रज-रीति,
न प्रीति रहै कब हूँ पल ढाँकी ।।
ठाकुर कैसहुँ भूलत नाहिनै,
ऐसी अरी वाबिलोकनि बाँकी ।
भावत ना छिन भौन को बैठिबो,
घूँघट कौन को लाज कहाँ की ।।

लगी अन्तर मैं करै बाहिर को,
बिन जाहिर कोउ न मानत है ।
दुख औ सुख हानि औ लाभ सबै,
घर की कोऊ बाहर भानतु है ।
कवि ठाकुर आपनि चातुरि सों,
सब ही सब भाँति बखानतु है ।
पर बीर मिले बिछुरे की बिथा,
मिलिकै बिछुरे सोई जानतु है ।।

का कहिये परी नेह अधीन,
रिसान दे लोग रिसानो ई सो है ।
और कहा कहिहै कहि लैन दै,
नाम बुरो तौ बखानो ई सो है ।
ठाकुर याकी है मोहिं प्रतीति सो,
बैर सबै रिस मानो ई सो है ।
वा घनश्याम अकेले बिना,
सिगरो ब्रज बीर बिरानो ई सो है ।।

आइ अगीत पछीत दई निसि,
टेरत मोहि सनेह के कूकन।
जानत हैं कि न जानत हैं,
कोई यौं न जरै नर नारि सरूकन।
ठाकुर हौं न सकौ कहिकै,
अब का कहिये हरि सों यह चूकन।
देखि उन्है न दिखाइ कछू,
ब्रज पूरि रह्यौ चहुँ ओर चहूँकन॥

काहे अरे मन साहस छाँड़त,
काहे उदास ह्वै देह तजै है।
वे मुख वे दुख आये चले गये,
एक सी रीति रही नहि रैहै।
ठाकुर का को भरोस करै हम,
या जगजालत भूल न ऐहै।
जानै सयोग में दीन्हों बियोग,
बियोग में सो का संयोग न दैहै॥

का कहिए कोई पीरक नाहिनै,
तातै हिये की जतैयत नाही।
भागन भेट भई कबहूँ सु,
घरीकु बिलोकै अघैयत नाहीं।
ठाकुर या घर चौचंद को डर,
तातै घरी घरी ऐयत नाही।
भेटन पैयत कैसे तिन्है,
जिन्है आँखिन देखन पैयत नाहीं॥

सापने हौं फुलवाई गई,
हरि अंक भरी भुज कंठन मेली।
हौं सकुची कोउ सुन्दरी देखत,
लै जिन बांह सो बांह पछेली।

ठाकुर भोर भये गये नींद के ,
देखहुँ तौ घर मांझ अकेली ।
आँख खुली तब पास न साँवरो ,
बाग न बावरो वृक्ष न बेली ।।

का कहिये कहिबे की नही
मग जोवत जोवत जोगयौ है ।
उन तोरत बार न लाई कछू ,
तन तै बृथा जोबन न खोगयौ है ।
कवि ठाकुर कूबरी के बस ह्वै ,
रस मैं बिस बावरो बो गयौ है ।
मनमोहन को हिलिबो मिलिबो ,
दिन चारिक चाँदनी हो गयौ है ।।

धिक कान जो दूसरी बात सुनै ,
अब एक ही रंग रहो मिलि डोरो ।
दूसरो नाम कजात कढ़ै
रसना जो कहूँ तो हलाहल बोरो ।
ठाकुर यों कहतीं ब्रजबाल ,
सो ह्यां बनितान को भाव है भोरो ।
ऊधो जू वे अँखियाँ जरि जाँय
जो साँवरो छाँड़ि तकै तन गोरो ।।

मोही में रहत रहैं मोही सों उदास सदा ,
सीखत न सीख तन सीख निरधारो है ।
चौंको सो चको सो कहूँ जक सो जको सो कहूँ ,
पाइन थको सो भाँति भाँतिन निहारो है ।
ठाकुर अचेत चित चोजवारी बातन में ,
जानत न हरि सों कहा धौ बोल हारो है ।
ऐसो चित्त चतुर सयानो सावधान मेरो ,
ये री इन आँखिन अजान करि डारो है ।।

एतो ब्रजमंडल बसत तासों काम कौन,
आनँद के भौन तुम्हैं देखि जीजियतु है।
सोऊ तुम इतै उतै अनत पनत हेरौ,
याही दुःख दाहन सरीर छीजियतु है।
ठाकुर कहत मेरी चाह की अचाह करौ,
चाहते की चाह को निबाह कीजियतु है।
प्रीति बिनु प्यारे कोऊ काहे को परेखो देइ,
प्रीति की प्रतीति को परेखो दीजियतु है॥

को हौ? जौतिषी है। कछू जोतिषै बिचारत हौ?
येही शुभ धाम काम जाहिर हमारौ तो।
आओ बैठ जाओ पानी पिओ पान खावौ फेर,
होय कै सुचित्त नेक गणित निकारौ तो।
ठाकुर कहत प्रेम नेम को परेखो देखि,
इच्छा की परिच्छा भली भाँति निरधारौ तो।
मेरो मन मोहन सों लागत है भाँति भांति,
मोहन को मन मोसों लागि है बिचारौ तो॥

अपने अपने निज गेहन में,
चढे दोऊ सनेह की नाँव पै री।
अँगनान में भीजत प्रेम भरे,
समयौ लखि मै बलि जाँव पै री।
कह ठाकुर दोउन की रुचि सौ,
रँग द्वै उमड़े दोउ ठाँव पै री।
सखी कारी घटा बरसै बरसाने पै,
गोरी घटा नन्दगाँव पै री॥

आजु यहि कौतुक छको है नंद-नंद बीर,
बरनौ न जात सो विचित्र चित्र मो पै री।
चलु बलि तोहि यो दिखाय लाऊँ बन घनो,
पायौ है निहार बलिहार भयौ सो पै री।

ठाकुर कहत कहाँ नीलमणि सोनबेलि,
सुखमा सकेलि कै न उपमा अरोपै री।
घन को निहारै तब वारै होत आपुन पै,
बीजुरी निहारै तब वारै होत तो पै री॥

येई हैं वे बृषभानुसुता
जिनसों मन मोहन मोह करै हैं।
कामिनि तो उन सी नहि दूसरि,
दामिनि की दुति को निदरै है।
ठाकुर कै हम ही यह जानतीं,
कै उनहूँ को जनाइ परै है।
छोटी नथूनी बड़े मुतियान,
वड़ी अँखियान बड़ी सुघरै है॥

सुरझी नहिं केतो उपाइ कियौ,
उरझी हुती घूँघट खोलन पै।
अधरान पै नेक खगी ही हुती
अटकी हुती माधुरी बोलन पै।
कवि ठाकुर लोचन नासिका पै,
मड़राइ रही हुती डोलन पै।
ठहरे नहिं डीठि फिरै ठटकी,
इन गोरे कपोलन गोलन पै॥

जब ते बिलोकि गई रावरो बदन वाल,
तब ते अचेत सी बियोग झार झुरई।
हेम की लता सी चपला सी चारु चाँदनी सी,
मदन सताई पै न मैं जनाई भुरई।
ठाकुर कहत भूमि विकल बिहाल परी,
देखिये गोपाल ताहि उपमा न जुरई।
रति के भँडार ते दुराय कै चोराय मानो,
काहू आनि मंदिर में रूप रासि कुरई॥

गावै पिकबैनी मृगनैनी हू वजावें वींन,
नाचैं चन्द्रमुखी चारु चाउ की चटक पैं।
कीरतिकुमारी वृपभानु की दुलारी राधे,
अटकी विलोकि लोक-लाज की अटक पै।
ठाकुर कहत चीर केसर के रंग रंगो,
अतर पगो सो मन मोहै पीत पट पै।
देख तो देखात कैसो राजत रसीलो आजु,
आली री वसत वनमाली के मुकुट पै॥

आग सी धँधाती ताती लपटे सिराय गईं,
पौन पुरवाई लागी सीतल सुहान री।
मृदुल अनूप चारु चाँदनी मलीन भई,
तापै छाँह छाई छूटी मानिनी को मान री।
ठाकुर कहत आली ग्रीषम गवन कीनी,
पावस प्रवेस वेस छवि सरसान री।
सावन सुहावन को आवन निरखि आली,
मेघ बरसन लागे हिय हुलसान री॥

कारे लाल पीरे धौरे धावत धुवाँ के रग,
कितने सुरग किते रग मटमाढ़े हैं।
कितने मही के रूप माधुरी करत घोर,
सारे चहुँ ओर होत गहगहे गाढ़े हैं।
ठाकुर कहत कवि बरनि बरनि थाके,
बरने न जात यों वहसि वार वाढ़े हैं।
मोहे लेत मनन जु ऐसी बने बनन जू,
आजु देखो घनन घनेरे रंग काढ़े है॥

दौरि दौरि दमकि दमकि दुरि दामिनि यौं,
द्वन्द देत दसहूँ दिसान दरसतु है।
घूमि घूमि घहरि घहरि घन घहरात,
घेरि घेरि घोर घनो सोर सरसतु है।

ठाकुर कहत पिक पीकि पीकि पी कों रटे,
प्यारो परदेस पापी प्रान तरसतु है।
झूमि झूमि झुकि झुकि झमकि आली,
रिमझिम झिमकि असाढ़ बरसतु है।।

पावस में परदेस ते आनि मिले पिय,
औ मनभाई भई है।
दादुर मोर पपीहरा बोलत,
तापर आनि घटा उनई है।
ठाकुर वा सुखकारी सुहावनि,
दामिनि कौंध कितै धौं गई है।
री अब तो घनघोर घटा,
गरजौ बरसौ तुम्हें धूरि दई है।।

पद्माकर

प्रीतम के संग ही उमगि उडि जैवे कोंन,
 एती अग-अंगनि परन्द पखियाँ दई।
कहै पदमाकर जे आरती उतारैं, चौर—
 ढारै श्रम हारै पै न ऐसी सखियाँ दई।
देखि द्रग द्वै ही सों न नेकुहीं अघैये इन,
 ऐसे झुकाझुक मे झपाक झँखियाँ दई।
कीजै कहा राम श्याम-आनन बिलोकिवे कों,
 विरचि विरचि न अनंत अँखियाँ दई।।

ए ब्रजचद गोविंद गोपाल
 सुन्यो न, कितेक कलाम किये मैं।
त्यों पदमाकर आँनद के नद हौ
 नँदनन्दन जानि लिये मैं।
माखन चोरि कै खोरिन ह्वै चले
 भागि कछू भय मानि जिये मैं।
दूरि ही दौरि दुरे जौ चहौ तौ
 दुरौ किन मेरे अँधेरे हिये मैं।।

प्रानन प्यारे तन ताप के हरन हारे,
 नंद के दुलारे ब्रजवारे उमहत हैं।
कहै पदमाकर उरूझे उर-अंतर यों,
 अंतर चहे हूँ जे न अंतर चहत है।
नैननि बसे है अङ्ग-अङ्ग हुलसें हैं,
 रोम-रोमनि रसे है तिकसे है को कहत हैं।
ऊधो वे गोविंद कोऊ और मथुरा मैं,
 यहाँ मेरे तो गोविन्द मोहि मोहि में रहत हैं।।

घर ना सुहात ना सुहात बन-बाहर हूँ,
बाग ना सुहात जे खुशाल खुशबोही सों।
कहै पदमाकर घनेरे धन धाम त्यों ही,
चंद ना सुहात चाँदनी हूँ जोग जोही सों।
साँझ ना सुहात ना सुहात दिन माँझ कछू,
व्यापी यह बात सो बखानत हौं तोही सों।
राति ना सुहात ना सुहात परभात आली,
जब मन लागि जात काहू निरमोही सों॥

गोकुल के कुल के गली के गोप-गाँवन के,
जौ लगि कछू को कछू भारत भनै नहीं।
कहै पदमाकर परोस पिछवारनि ते,
द्वारन ते दौरि गुन औगुन गनै नही।
तौ लौं चलि चतुर सहेली आई कोऊ कहूँ,
नीके कै निचोरे ताहि करते मनै नहीं।
हौं तो तो श्याम-रंग में चुराइ चित्त चोरा-चोरी,
बोरत तौ बोर्‌यौ पै निचोरत बनै नहीं॥

मोहि तजि मोहनै मिल्यो है मन मेरो दौरि,
नैन हूँ मिले हैं देखि देखि साँवरो शरीर।
कहै पदमाकर त्यों कान मय कान भये,
हौं तौ रही जकि थकि भूली-सी भ्रमी-सी बीर।
ये तौ निरदई दई इनको दया न दई,
ऐसी दशा भई मेरी कैसे धरौं तन धीर।
हो तो मन हूँ के मन नैनन के नैन जो पै,
प्रानन के प्रान तो पै जानते पराई पीर॥

ईश की दुहाई शीशफूल तें लटकि लट,
लट तैं लटकि लट कंध पै ठहरिगो।
कहै पदमाकर सुमंद चलि कंध हूँ तैं,
भूमि भ्रमि भाई-सी भुजा में त्यों भभरिगो।

भाई-सी भुजा तैं भ्रमि आयो गोरी-गोरी बाँह,
गोरी बाँहहू तै चापि चूरनि में अरिगो।
हेरेउ हरे हरैं हर चूरनि तै चाहीं जौलौ,
तौलौं मन मेरो दौरि तेरे हाथ परिगो॥

चाह भर्यो चंचल हमारो चित्त नील बधू,
तेरी चल चंचल चितौनि में बसत है।
कहै पदमाकर सु चचल चितौनि हू ते,
औझकि उझकि झझकनि मे फँसत है।
औझकि उझकि झझकनि तै सुरझि बेश,
बाँही की गहनि माँहि आइ बिलसत है।
बाँही की गहनि तैं गुनाही की कहनि आयो,
नाही की कहनि तै सु नाही निकसत है॥

धारत ही बन्यो ये ही मतो,
गुरु लोगन को डर डारत ही बन्यो।
हारत ही बन्यो हेरि हियो,
पदमाकर प्रेम पसारत ही बन्यो।
बारत ही बन्यो काज सबै,
अब यों मुखचंद उघारत ही बन्यो।
टारत ही बन्यो घूँघट को पट,
नदकुमार निहारत ही बन्यो॥

भेद बिन जाने एती वेदन बिसाहिबे को,
आज हौं गई ही बाट बंसीवट वारे की।
कहै पदमाकर लटू ह्वै लोट-पोट भई,
चित्त में चुभी जो चोट चाय चटवारे की।
बावरी लौ बूझति बिलोकति कहा तू बीर,
जानै कहा कोऊ पीर प्रेम-हटवारे की।
उमड़ि उमड़ि बहै बरसै सु आँखिन ह्वै,
घट में बसी जो घटा पीत-पटवारे की॥

जाहिरै जागत सी जमुना,
जब वूड़ै बहै उमहै वह बेनी।
त्यौं पदमाकर हीर के हारन,
गग तरंगन को सुख देनी।
पाँयन के रँग सों रँगि जात सी,
भाँति ही भाँति सरस्वति सेनी।
पैरै जहाँई जहाँ वह बाल,
तहाँ तहँ ताल मैं होत त्रिबेनी॥

शोभित स्वकीयगन गुनगनती मैं जहाँ,
तेरे नाम ही की एक रेखा रेखियतु है।
कहै पदमाकर पगी यों पति-प्रेम ही मे,
पदमिनि तोसी तिया तूही पेखियतु है।
सुबरन रूप जैसो तैसो शील सौरभ है,
याही ते तिहारो तनु धनि लेखियतु है।
सोने में सुगन्ध नाहिं गध में सुन्यो न सोनो,
सोनो औ सुगंध तोमें दोनों देखियतु है॥

ये अलि या बलि के अधरानि मैं,
आनि चढ़ी कछु माधुरई सी।
ज्यों पदमाकर माधुरी त्यों,
कुच दोउन की चढ़ती उनई सी।
ज्यों कुच त्यों हीं नितंब चढ़े कछु,
ज्योंहीं नितंब त्यों चातुरई सी।
जानि न ऐसी चढ़ाचढ़ि मै,
किहि धों कटि बीच ही लूटि लई सी॥

ये अलि हमें तो बात गात की न जानि परै,
बूझति न काहे यामे कौन कठिनाई है।
कहै पदमाकर क्यों [illegible] ना समात आँगी,
जागी उर में ऊँचाई है।

तुव तजि पाँयन चली है चचलाई कित,
बावरी बिलोकै क्यो न आँखिन मे आई है।
मेरी कटि मेरी भटू कौन धौ चुराई,
तेरे कुचन चुराई कै नितंबन चुराई है॥

स्वेद को भेद न कोउ कहै,
व्रत आँखिन हू अँसुवान को धारो।
त्यौ पदमाकर देखती हौ,
तन को तन कप न जात सँभारो।
ह्वै धौ कहा को कहा गयौ यौ,
दिन द्वैक ही ते कछु ख्याल हमारो।
कानन में बसी बाँसरी की धुनि,
प्रानन मे बसो बाँसरीवारो॥

जाहि न चाह कहूँ रति की,
सु कछू पति को पतियान लगी है।
त्यौ पदमाकर आनन मै रुचि,
कानन भौह कमान लगी है।
देति पिया न छुवै छतियाँ,
बतियाँन मैं तो मुसकान लगी है।
पीतमै पान खबाइये को,
परजंक के पास लौं जान लगी है॥

आरत सों आरत सम्हारत न सीस-पट,
गजब गुजारत गरीबन की धार पर।
कहै पदमाकर सुगंध सरसावै सुचि,
बिथुरि बिराजै बार हीरन के हार पर।
छाजत छबीली छिति छहरि छरा की छोर,
भोर उठि आई केलि-मदिर के द्वार पर।
एक पग भीतर सु एक देहरी पै धरै,
एक कर कंज एक कर है किबार पर॥

निशि अँधियारी तऊ प्यारी परबीन,
चढ़ि मान के मनोरथ के रथ पै चली गई।
कहै पदमाकर तहाँ न मन मोहन सों,
भेट भई सटकि सहेत तै अली गई।
चंदन सों चाँदनी सो चंद सों चमेलिन सों,
और बन बेलिन के दलनि दली गई।
आई हुती छैल के छलै कों छल छंदनि सों,
छैल तो छल्यो न आपु छैल सों छली गई॥

कौन है तू कित जाति चली,
बलि बीती निशा अधराति प्रमानै।
हौ पदमाकर भावति हौ;
निज भावते पै अब हीं मोहि जानै।
तो अलबेली अकेली डरै किन,
क्यौ डरौ मेरी सहाय के लानै।
है सखि सग मनोभव-सौ भट,
कान लौ बान-शरासन तानै॥

दोऊ छबि छाजती छबीली मिलि आसन पै,
जिनहि बिलोकि रह्यो जात न जितै जितै।
कहै पदमाकर पिछौहै आई आदर सों,
छलिया छबीलो छैल बासर बितै बितै।
मूंदै तहाँ एक अलबेली के अनोखे दृग,
सुदृग मिचावनी के ख्यालनि हितै हितै।
न सुक नबाइ ग्रीवा धन्य धन्य दूसरी को,
औचक अचूक मुख चूमत चितै चितै॥

ख्याल मन-भाये कहूँ करिकै गोपाल,
घरै आये अति आलस मढेई बड़े तरके।
कहै पदमाकर निहारि गजगामिनी के
गजमुकतान के हिये पै हार दरके।

येते पै न आनन ह्वै निकसे बधू के बैन,
अधर उरहने सु दीबै काज फरके।
कन्धन ते कंचुकी भुजानि ते सु बाजूबद,
पौचन ते कगन हरे ही हरे सरके॥

'बोलति न काहे' एरी, 'पूछे विन बोलौ कहा',
पूछति हौं 'कहा भई भेद अधिकाई है'।
कहै पदमाकर 'सु मारग के गये आये',
'साँची कहु मोसों कहाँ आज गई-आई है।
'गई-आई हौ तो साँवरे के पास' 'कौन काज',
'तेरे काज ल्यावन सु तेरी ही दुहाई है'।
'काहे ते न ल्याई फिरि मोहन बिहारी जू कौ',
'कैसे वाको ल्याऊ!' 'जैसे वाको मन ल्याई है'॥

सौ दिन को मारग तहाँ को वेगि माँ गिबिदा,
प्यारी पदमाकर प्रभात राति बीते पर।
सो सुन पियारी पिय गमन बराइबे को,
आँसुन अन्हाइ बैठी आसन सु तीते पर।
बालम बिदेस तुम जात हौ तो जाउ पर,
साँची कहि जाउ कब ऐहौ भौन रीते पर।
पहर कें भीतर कै दो पहर भीतर ही,
तीसरे पहर कै धौं साँझ ही बितीते पर॥

रूप रचि गोपी को गोबिन्द गो तहाँई जहाँ,
कान्ह बनि बैठी कोऊ गोप की कुमारी है।
कहै पदमाकर यो उलट कहै को कहा,
कसकै कन्हैया कर मसकै जु प्यारी है।
नारी ते न होत नर नर ते न होत नारी,
बिधि के करे हू कहूँ काहू न निहारी है।
काम करता की करतूत या निहारी जहाँ
नारी नर होत नर होत लख्यो नारी है॥

दोऊ अटान चढ़े पदमाकर,
देखैं दुहूँ को दुवौ छवि छाई।
त्यों ब्रजबाल गोपाल तहाँ
बनमाल तमालहि की दरशाई।
चंद्रमुखी चतुराई करी तब,
ऐसी कछू अपने मन भाई।
अंचल ऐंचि उरोजन तैं
नदलाल को मालती-माल दिखाई॥

कूलन में केलि में कछारन मे कुजन में,
क्यारिन मे कलिन कलीन किलकन्त है।
कहै पदमाकर परागन में पौन हू में,
पानन मे पीक मे पलाशन पगन्त है।
द्वार में दिशान मे दुनी में देश-देशन में,
देखौ दीप-दीपन मे दिपत दिगन्त है।
बीथिन में ब्रज में नबेलिन मे बेलिन मे,
बनन में बागन में बगरो बसन्त है॥

औरै भाँति कुंजन में गुजरात भौर-भीर,
औरै डौर झौरन मे बौरन के ह्वै गये।
कहे पदमाकर सु औरै भाँति गलियान,
छलिया छबीले छैल औरै छवि छ्वै गये।
औरै भाँति विहग-समाज में अवाज होत,
ऐसे ऋतुराज के न आज दिन द्वै गये।
औरै रस औरै रीति औरै राग औरै रग,
औरै तन औरै मन औरै बन ह्वै गये॥

चालौ सुनि चंदमुखी चित में सुचैन करि,
तित बन बागन घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै पदमाकर मयूर मजु नाचत है,
चाइ सों चकोरिन चकोर चूमि-चूमि रहे

कदम अनार आम अगर अशोक थोक,
लतन समेत लोने-लोने लगि भूमि रहे।
फूलि रहे फलि रहे फैलि रहे फबि रहे,
झपि रहे झूलि रहे झुकि रहे झूमि रहे॥

साँझ के सलौने घन सबुज सुरङ्गन सों,
कैसे कै अनंग अग-अगनि सताउतो।
कहै पदमाकर झकोर झिल्ली सोरन को,
मोरन को महत न कोऊ मन ल्याउतो।
काहू बिरही की कही मानि लेतो जो पै दई,
जग मैं दई तो दयासागर कहाउतो।
एरी बिधि बौरी गुनसार घनो होतो, जो पै
बिरह बनायो तौ न पावस बनाउतो॥

लागत वसंत के सु पाती लिखी प्रीतम कों,
प्यारी परवीन है हमारी सुधि आनवी।
कहै पदमाकर इहाँ को यो हवाल,
बिरहानल को ज्वाल सो दवानल ते मानवी।
ऊब को उसासन को पूरो परगास सो तौ,
निपट उसास पौन हू ते पहिचानवी।
नैनन को ढग सो अनंग-पिचकारिन ते,
गातन को रग पीरे पातन ते जानवी॥

चंचला चमंकै कहूँ ओरन ते चाह भरी,
चरज गई थी फेर चरजन लागी री।
कहै पदमाकर लवगन की लोनी लता,
लरज गई थीं फेर लरजन लागीं री।
कैसे धरौ धीर बीर त्रिबिध समीरै
तन तरज गई थीं फेर तरजन लागी री।
घुमड़ि घमड घटा घन की घनेरी अबै,
गरज गई थी फेरि गरजन लागीं री॥

मल्लिकान मंजुल मलिन्द मतवारे मिले,
मन्द-मन्द मारुत मुहीम मन साकी है।
कहै पदमाकर त्यो नदन नदीन नित,
नागर नवेलिन की नजर नसा की है।
दौरत दरेरो देत दादुर सु दू दै दीह,
दामिनी दमकत निशान मे दसा की है।
बद्दलनि बुन्दनि बिलोकि बगुलान बाग,
बँगला नवेलिन बहार बरसा की है॥

चार हूँ ओर ते पौन झकोर,
झकोरनि घोर घटा घहरानी।
ऐसे समय पदमाकर काहु की,
आवत पीत पटी फहरानी।
गुंज की माल गोपाल गरे,
ब्रजबाल बिलोकि थकी थहरानी।
नीरज ते कढि नीर-नदी,
छबि छीजत छीरज पै छहरानी॥

लालन पै ताल पै तमालन पै मालन पै,
बृन्दावन बीथिन बहार बंशीबट पै।
कहै पदमाकर अखंड़ रासमडल पै,
मडित उमंडि महा कालिन्दी के तट पै।
छिति पर छान पर छाजत छतान पर,
ललित लतान पर लाडिली के लट पै।
आई भली छाई यह शरद जुन्हाई, जेहि
पाई छबि आजु ही कन्हाई के मुकुट पै॥

खनक चुरीन की त्यों धनक मृदंगन की,
रुनुक-झुनुक सुर नुपुर के जाल को।
कहै पदमाकर त्यों बाँसरी की धुनि मिलि,
रह्यो बँधि सरस सनाको एक ताल को।

देखत बनत पै न कहत बनै री कछू,
विविध विलास यों हुलास यह ख्याल को।
चंद - छवि - रास चाँदनी को परगास,
राधिका को मद हास रास-मंडल गोपाल को॥

फाग के भीर अभीरन में गहि।
गोविंदै लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मनकी पदमाकर,
ऊपर नाय अवीर की झोरी।
छीनि पितंबर कवर तें सु,
विदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाय कही मुसकाय,
लला फिरि आइयो खेलन होरी॥

गोकुल में गोपिन गोविन्द संग खेली फाग,
राति भरी आलस में ऐसी छवि छलकै।
देह भरी आलस कपोल रस रोरी भरे,
नीद भरे नयन कछूक जपै जलकै।
लाली भरे अधर वहाली भरे मुखवर,
कवि पदमाकर विलोकै कौन सलकै।
भाग भरे लाल औ सुहाग भरे सब अंग,
पीक - भरी पलकैं अवीर भरी अलकैं॥

अधखुली कंचुकी उरोज अध-आधे खुले,
अधखुले वेस नख - रेखन की झलकै।
कहै पदमाकर नवीन अध-नीवी खुली,
अधखुले छहरि छराके छोर छलकैं।
भोर जगि प्यारी अध-ऊरध इतै की ओर,
झाँकी झिखि झिरखि उघारि अध पलकै।
आँखै अधखुली अधखुली खिरकी है खुली,
अधखुले आनन पै अधखुली अलकै॥

एकै संग धाए नंदलाल औ गुलाल दोऊ,
दृगनि गये जु भरि आनँद मढ़ै नहीं।
धोय धोय हारी पदमाकर तिहारी सौह,
अब तो उपाय एकौ चित्त पै चढ़ै नही।
कैसी करों कहाँ जाउं कासों कहौ कौन सुनै,
कोऊ तो निकासो जा सों दरद बढ़ै नहीं।
ये री मेरी बीर जैसे तैसे इन आँखिन तें,
कढ़िगो अबीर पै अहीर को कढ़ै नही॥

फागुन में कागुन बिचारि न दिखाई देत,
एती बेर लाई उन कानन में नाइ आव।
कहै पदमाकर हितू जो है हमारी तौ,
हमारे कहै बीर वहि धाम लगि धाइ आव।
जोरि जो धरी है वेदरद दुआरे होरी,
मेरी बिरहागि की उलूकनि लौ लाइ आव।
एरी इन नयनन के नीर में अवीर घोरि,
बोरि पिचकारी चित्तचोर पै चलाइ आव॥

भाल पै लाल गुलाल गुलाब सों,
गेरि गरे गजरा अलबेलो।
यों बनि बानिक सों पदमाकर,
आये जु खेलन फाग तौ खेलो।
पै इक या छबि देखिबे के लिये,
मो बिनती कै न झोरिन झेलो।
राउर रंग रगी अँखियान में,
ए बलबीर अबीर न मेलो॥

—:००:—

प्रतापसाहि

दीप सम दीपति उदीपति अनूप,
निज रूप कै सरूप रति रूपहि हरति है।
कहै परताप करि मंजन सरस,
मनरजन पिया के दृग अजन धरति है।
ताहि समै दूती दिखायो आनि भौर लिखि,
निपट निरास ह्वै उमासहि भरति है।
सारस बिलोचनि विचारि चित्त चेत,
राजहंसन के वंस की सिपारसि करति है॥

सीख सिखाई न मानित है,
बर ही सब संग सखीन के आवै।
खेलत खेलत नये जल मैं,
बिन काम बृथा कत जाम बितावै।
छोड़ के साथ सहेलिन को,
रहि कै कहि कौन सबादहि पावै।
कौन परी यह बानि अरी,
नित नीर भरी गगरी ढरकावै॥

चंचलता अपनी तजि कै,
रस ही रस सों रस सुन्दर पीजियो।
कोऊ कितेक कहै तुम सों,
तिनकी कही बातन को न पतीजियो।
चोज चबाइन के सुनियो न,
यही इक मेरी कही नित कीजियो।
मंजुल मंजरी पहो, मलिंद,
बिचारि कै भार सँभारि कै पीजियो॥

होत प्रभात अन्हायवे काज,
सखीन के साथ तहाँ पग धारे।
मंजन कै पहिरे पट सुन्दर,
भूषन अंगन अंग सँबारे।
तीर ह्वै नीर भरी गगरी,
सुबिलोकि नए तहँ कौतुक भारे।
आजु सरोवर में सजनी जल,
भीतर पंकज फूल निहारे॥

चाँदनी महल फैल्यो चाँदनी फरस,
सेज-चाँदनी बिछाय छवि चाँदनी रितै रही।
बैठी सजि सुन्दरि सहेलिनि समाज बीच,
बदन पै चारुता चिराक की बितै रही।
कहै परताप आये मोहन रँगीले श्याम,
नख-सिख देखि करि आनन छितै रही।
सुघर बिचारि कलानिधि कौ निहारि,
मनुहारि करि फेरि मुख पीतम चितै रही॥

कोटि उपाय किये हिय को,
रचि बातन सों न सनेह दुर्‌यो परै।
सूधे सुभाय बिना बनितान को,
क्यों करि कै मन मान मुर्‌यो परै।

चाखिये तो बिख भाखिये साँच,
जो राखिये नेम तो प्रेम पुर्‌यो परै।
आजु प्रभात समै लखिये,
अरबिन्दन तें मकरन्द घुर्‌यो परै॥

खेल न खेलिये ऐसो भटू,
सु परोसिनि कोऊ कहूँ लखि लैहै।
मानहु ना बरजी हमरी,
अब काहे को कोऊ सिखावन दैहै।
नद कुमार महा सुकुमार,
बिचारि कै फेरि हिये पछितैहै।
घालिये ना इन फूलन की पँखुरी
कहूँ अगनि मे गड़ि जैहै॥

ननद जिठानी अनखानी रहैं आठौ जाम,
बरबस बातन बनाय आय अरती।
रचि-रचि बचन अलीक बहु भाँतिन के,
करि-करि अनख पिया के कान भरतीं।
कहैं परताप कैसे बसिये निकसिये क्यों,
मौन गहि रहिये तऊ न नेक टरतीं।
निज निज मदिर मे साँझ ते सवेरे दीप,
मेरे केलिमंदिर में दीपकौ न धरतीं॥

रग घने पति-प्रेम सने,
सब रैनि गने मन मैन हिलोरन।
अंगनि मोरति भोर उठी,
छिति पूरति अंग-सुगंध झकोरन।
रूप अनूप निहारि-निहारि,
गुमान जनाय कह्यो दृग-कोरन।
नन्दकिशोर अहो चित-चोर,
न जाहुँ मैं न्हान सरोवर ओरन॥

कौन सुभाव री तेरो पर्‌यो,
नहि भूषन चित्र विचित्र बनावै।
चन्दन चूर कपूर मिलै,
घिसि कै अँगराग न अंग लगावै।
तोसों दुरावति हौ न कछू,
जिहि तें न सुहागिल सौति कहावै।
बेलि चमेलिनि कों तजि कै,
अलि काहे कों कज-कली नित ल्यावै॥

कानि करै गुरु लोगन की न,
सखीन की सीख नही मन आवति।
ऐंड भरी अँगिराति खरी कत,
घूँघट मे नये नैन नचावति।
मंजन कै दृग अंजनि आँजति,
अग-अनग उमंग बढ़ावति।
कौन सुभाव री तेरो पर्‌यो,
खिन आँगन में खिन पौरि में आवति॥

आजु सखी ननदी करि प्यार,
विभूषन भूषन दै पठए हैं।
मंगल - मूल बनाय विचित्र,
सुफूल दुकूल निहारि नए हैं।
आँनद की सुघरी उघरी,
सिगरे मन वाँछित काज भए हैं।
बूझति तो कहँ वासर के,
कहुरी अव कैतिक जाम गए हैं॥

मनिमय मन्दिर के आंगन अनौखी बाल,
बैठी गुरु लोगन में सोभा सरसाइ कै।
गरक गुलाब नीर, अरक उसीरन के,
राखे उन ओरन सुगंध बगराइ कै।

कहै परताप पिय नैन के इसारतनि,
सारत जनाई मुख मृदु मुसक्याइ कै।
बोली नहिं बोल कछु सुन्दरि सुजान रही,
पुण्डरीक-सुमन सोहायौ दिखराइ कै॥

लै करि सुबास बारि बिमल सुबासित कै,
मंजन कियौ है तन अधिक उमाहे तैं।
केसर, कपूर, कसतूरी औ अतर लै कै,
अंगराग, अंगन लगायौ चित्त चाहे तैं।
कहै परताप साजि सकल सिंगार तन,
भूषन-विभूषन सकल अबगाहे तैं।
कब की निहारति हौं नैननि सों कंज-नैनि,
बेसरि बनै न आज पहरति काहे तैं॥

अङ्ग-अङ्ग भूषन-विभूषन बिरचि,
जोति जोवन-जवाहिर की जाहिर जगाई तैं।
चहचहे चोवा चारु चंदन अरगजा औ,
अङ्गराग हेत कल केसर मँगाई तैं।
कहै परताप दुति देह की दुरङ्ग होत,
सुरग कुसुंभी ऐसी चुनरि रँगाई तैं।
रीझिवारी एरी सुनि सुन्दरि सुजान बारी,
भाल क्यों न बैंदी मृगमद की लगाई तैं॥

केलि के रङ्ग प्रसङ्गन में,
निशि पीतम संग सबै निशि जागी।
भोर भये अरसाति जम्हाति,
उठी अँगराति बिथा उर पागी।
बोली न बोल कछू सखियान सों,
नीर भरें अँखियाँ बड़भागी।
सुन्दरि बैठि अगार के द्वार,
सुनीर निचोल निचोंवन लागी॥

मोचति ही नैनजल रैन दिन सोचति ही,
समुझि सकोचन सों मौन मुख धरिबो।
हूँटिगो सुमन संग छूटिगो सहेलिन को,
भूलि गयो औरै बनितान को निदरिबो।
कहै परताप कौन जानत पराई पीर,
एरी मेरी बीर रह्यो जी को एक जरिबो।
का सों कहौ ही को दुख प्यारे निज पीको मोहि—
लागत न नीको नित मिलिबो बिछुरिबो॥

कहाँ जैये कौन भाँति कैसे समुझैये मन,
काहि दरसैये कहि काज निज लेखे को।
आप मनमानै निज हित सोई जानै सब,
कोऊ नहिं जानैं प्रेम पूरन परेखे को।
कहै परताप कैसे चित्त बहरैये,
सुख पैये किमि चित्त माहि एक हू निमेखे को।
झूँटो सब जानि पर्यो कह्यो मुख बैननि को,
साँचो सब जानि पर्यो नैननि के देखे को॥

बीति गयी सिगरी रजनी,
चहुँ ओर तें फैलि गयी नभ लाली।
कोक-वियोग मिट्यो, परिपूर—
उदै भयो सूर महा छबि साली।
बोलि उठी बन बागन में,
अनुरागन सों चहुँधा चटकाली।
सुन्दर स्वच्छ सुगन्ध सन्यो—
मकरन्द झरै अरबिन्द तें आली॥

नाहक चित्त उदास करै,
मुख मौन धरैं मन ही मन सूखतीं।
प्रेम-प्रसंगन को तजि कै,
निज अंगन में नहिं भूषन भूषती।

तापन सों तचती बिरमे,
बिन काज बृथा मन माहि बिदूखतीं।
का कहिये इन सो सजनी,
मकरन्दहिं लेत मलिन्दहि दूखती ॥

तड़पै तड़िता चहुँ ओरन ते,
छिति छाई समीरन की लहरै।
मदमाते महा गिरिशृंगन पै,
गन मजु मयूरन के कहरै।
इनकी करनी बरनी न परै,
मगरूर गुमानन सों गहरै।
घन ये नभ-मंडल में छहरै,
हरै कहूँ जाय, कहूँ ठहरै ॥

चंचल चपला चारु चमकत चारों ओर,
झूमि-झूमि धुरवा धरनि परसत है।
सीतल समीर लगै दुखद वियोगिन्ह,
संयोगिन्ह-समाज सुखसाज सरसत हैं।
कहै परताप अति निबिड़ अँधेरी माँह,
मारग चलत नाहि नेकु दरसत है।
झुमड़ि झलानि चहुँ कोद ते उमड़ि आज,
धाराधर धारन अपार बरसत हैं ॥

घोर घटा घहरै नभ-मंडल,
तैसिय दामिनि की दुति जागत।
धावत धूरि भरें धुरवा,
गिरि-शृंगन पै अनुरागत।
फैली नयी मुरवा हरियाई निहारि,
संजोगिनि के हियरे अनुरागत।
रीति नई रितु पावस में,
ब्रजराज लखै रितुराज सो लागत ॥

मोतिन हार लसै बकुला,
घन में चकवारन की छबि छाई।
इन्द्र-बधू बगरी बन में,
तन चूनरी चारु मनो पहिराई।
दामिनि की दुति यों दरसै,
सु भरी घनी बन्दन मांग सुहाई।
आजु पिया बनि बानक सों,
सु नवीन बनी बरषा बनि आई॥

आई रितु पावस प्रताप घनघोर भारी,
सघन हरी री बन मंडन बढ़ाए री।
कोकिल कपोत सुक चातक चकोर मोर,
ठौर ठौर कुजन में पंछी सब छाए री।
जमुना के कूल, औ कदबन की डारन पै,
चारों ओर घोर सोर मोरन मचाए री।
एरी मेरी बीर! अब कैसे कै मैं धीर धरौं,
आए घन स्याम, घनस्याम नहिं आए री॥

स्वेत स्वेत बक के निसान फहरान लागे,
ऐंचि ऐंचि चपल कृपान चमकाए री।
घहर भुसुडी की अवाज-सी करन लागे,
बुंदन के झरनन झीने झरि लाए री।
भनत प्रताप रतिनायक नरेस जू ने,
धीर गढ तोरिबे को पावस पठाए री।
ए री मेरी बीर! अव कैसे कै मैं धीर धरौं,
आए घन स्याम, घनस्याम नहिं आए री॥

बदली दुगुन दुति कदली कदम्बन की,
अदली अतन कर सदली कतन में।
विटपन डोलैं करि विविध कलोलैं,
बोलैं कीर कुल कोकिल गुमान भरे मन में।

कहै परताप सब लखियत औरै और,
गति को गुमान गजराजन के गन में।
सुखनि अतूलै फिरैं प्रेम-रस भूलै फिरैं,
फूले फिरै आज मृगराज मधुबन में ॥

पल्लव फूल दुकूल रचे,
दृग अजन भृङ्ग सरूप सुहायो।
केसर अङ्ग पराग लसै,
मृदु हास त्यों कुन्दकली छबि छायो।
साजि गुलाब की सेज रची,
कल कोकिल कंठ सुबोल सुनायो।
जाय इकन्त ह्वै कन्त निहारि,
बनाय बसंत नयो दिखरायो ॥

—:oo:—

ग्वाल

नखशिख रूप की झलाझली है सघनाई ,
जंघ केल नाभि कूप आवै दरशन मैं ।
हाथ मैं न अचै कटि केहरी दुबीच तहाँ ,
उदर— सरोवर अपार है तरन मैं ।
'ग्वाल' कवि कुच-कोक दुरे कर बासन तें ,
नैंन ये न मृग भरैं चौकड़ी चलन मैं ।
जो पै तुम्हें सौख है सिकार ही सो प्यारेलाल ,
तौ पै क्यों न खेलौ तरुनी के तन-बन मैं ।।

बाल-ताल तीर मैं तमाल की तराईं तरै ,
तन तनजेब सों दुरावै गुन गाँसे मैं ।
न्हाय के नवेली कढ़ी नाइ कै नुकीले नैंन ,
चैन की चलन मढ़ी मैंन - प्रेम - पासे मैं ।
'ग्वाल' कवि ऊंचे वे उरोज की अगारिन पै ,
लिपटी अलक ताके ललित तमासे मैं ।
कंचन के कलस सुधा के भरे जानि ,
ससि खैंचि रह्यौ मानो नली रेसम के फाँसे मैं ।।

बैठी सास पास चदबदनी बिकास रास ,
देखि दुति दंतन की दाड़िम दरकि परे ।
न्योति गई आय के जसोमति की आली तहाँ ,
औचक अरुन ओंठ प्यारी के फरकि परे ।

गरकि गरकि प्रेम पारी परजंक पर,
धरकि-धरकि हिय हौल सो भभरि जात।
ढरकि-ढरकि जुग जंघन जुटन देइ,
तरकि-तरकि वद कंचुकी के करि जात।
'ग्वाल' कवि अरकि-अरकि पिय थामैं तऊ,
थरकि-थरकि अंग पारे लों बिखरि जात।
सरकि-सरकि जाय सेज पै सरोजनैनी,
फरकि-फरकि केलि फद ते उछरि जात॥

मीन मृग खजन खिसान-भरे मैन वान,
अधिक गिलान-भरे कज कल ताल के।
राधिका छबीली की छहर छबि-छाक भरे,
छैलता के छोर भरे भरे छबि-जाल के।
'ग्वाल' कवि आन-भरे, सान-भरे, स्यान भरे,
स्यान भरे कछु अलसान-भरे माल के।
लाज-भरे, लाग-भरे, लोभ-भरे, लाभ-भरे,
लाली-भरे लाड़-भरे लोचन है लाल के॥

कहिबे को हम तो बियोगिनि विदित नित,
रे पर सँजोग हू ते सुमति सुधारी है।
ऊधो तोहिं वह इहाँ कहूँ न लखाई पर्यो,
साँचे ही अलख तोहि भयो गिरधारी है।
'ग्वाल'कवि ह्याँ तौ वही जाम-जाम धाम-धाम,
मूरति मनोहर न नैको होत न्यारी है।
कानन मै कानन मै प्रानन मै आखिन मैं,
अंगन मे रोम-रोम रसिक-बिहारी है॥

सामन की तीजें पिय भीजें बारि-बूदनसौ,
अग-अग ओढनी सुरंग रंग बोरे की।
गावत मलारे सुनि मुख की पुकारे जोर,
झिल्ली झनकारे घन करे सहजोरे की।

'ग्वाल' कवि करत बिहार है उदारता में,
पौन हूँ चलत जहाँ सीतल झकोरे की।
घमक घटान की चमक चपलान की,
सु झमक जरी की तामै रमक हिडोरे की ॥

मान की न बेर सनमान की है बेर प्यारी,
मान कह्यो मेरो झुक झांकि तौ झमाके सों।
लहलही बेले डार-डार पर खेले हेले,
मेले बाह बाले लालै छबि के छमाके सों।
'ग्वाल' कवि बूँदे दूंदे रूदे बिरहीन हीन,
नेह की न मूंदे ये न मूंदे हैं गमाके सों।
घूम आये झूम आये लूम आये भूमि आये,
चूमि चूमि आये घन चंचलै चमाके सों ॥

सीरे सीरे नीर भये नदिन के तीर तीर,
सीरे भये चीर धरा सीरी सब परि गई।
दसहू दिशा ते दिन रात लागी कुहरान,
पौन सरसान साफ तीर सी निकरि गई।
'ग्वाल' कवि ऐसे या हिमत में न आये कत,
सो तुम्हे न दोष सलसत औरै ढरि गई।
सूख गये फूल भौर झौर उड़ि गये मानों
काम की कमान की कमान सी उतरि गई ॥

आई एक ओर ते अलीन लै किशोरी गोरी,
आयो एक ओर ते किशोर वाम हाल पै।
भाजि चल्यौ छैल छरी छोड़ पै, छबीलन ने--
छरी को उठाय धाय मारी उर माल पै।
'ग्वाल' कवि हो हो कहि चोर कहि चेरो कहि,
बीच मैं नचायौ थेई तत् थेई ताल पै।
ताल पै तमाल पै गुलाल उड़ि छायो ऐसो,
भयो एक और नँदलाल नँदलाल पै ॥

चन्द्रशेखर बाजपेयी—"शेखर"

थोरी-थोरी बैस की किसोरी तन गोरी-गोरी,
भोरी-भोरी बातन सो हियरो हरति है।
केतकी तें सरस कही न परै कुन्दन-सी,
चचला तै चौगुनी मरीचिका धरति है।
जगर-मगर होति इन्दु-वदनी की दुति,
सेखर अवास कों प्रकासित करति है।
मानो मँज्यो मंजु मैन-मुकर-महल तामैं,
अमल अधूम महताब-सी बरति है॥

आनन अनूप कर चरन सरोज ओज,
कुचन कटाछन कपूर तरसत है।
जपा-की-सी अधर गुलाब-सी चिबुक चारु,
कुन्द-की-सी रदन रदन दरसत है।
मंजु मृगमद-सी सरीर सब सुन्दरी के,
केतकी के पत्र की प्रभा को परसत है।
रूप-गुन-जोवन अनूप गति-दूतिका सी,
अग अग अमित सुगन्ध सरसत है॥

रूप को-सो सागर उजागर अनूप सोहै,
जोहै दृग दूरि ही ते करन बसी को है।
मोदभरो उदित अमद दुति आठो जाम,
सौतिन को करत सरोजमुख फीको है।
सेखर सरस रस पानिप अमोल डोल,
मंजु मन खंजन मलिन्द बर जी को है।
चन्द हू ते नीको मनमोहन धनी को,
सबही को सुखदैन मुख-चन्द भावती को है॥

गोरे-गोरे गोल अंग अमल अमोल रंग,
चोरे लेत चित रस बोरे परसत है।
आबदार लसत गुलाब के सुमन सुचि,
बिसद बँधूँक ज्यों सुगन्ध बरसत है।
सेखर अरुन रुचि आसन रुचिर राजें,
जोबन - नरेस के जलूस सरसत हैं।
नैन सुखदैन छबि - ऐन मृगनैनी तेरे,
मैन के से मुकुर कपोल दरसत है॥

सुन्दर सरस सोहै मोहै दरसत मन,
परसि प्रमोद को प्रकास होत तन मैं।
बैठो उड़ि अम्बुज के ऊपर अनूप अलि,
चलत न चित्त चुभ्यो सौरभ सघन मैं।
सेखर सुरुचि रस की-सी छींट छबि देत,
छैल को सुमन आयो सोभा के सदन मैं।
भावती के बदन बिराजै स्यामबिन्दु मनो,
गरक गोविन्द मो गुलाब के सुमन मैं॥

प्रात प्रभाकर की रुचि रंजित,
पंकज की पखुरी छबि - जाली।
कै अनुराग प्रभा प्रगटी सब,
रागिनी रागन की परनाली।
सेखर नैनन कों सुखदेन किधों
रति की रुचि नैनन घाली।
पूरित राग रजोगुन-सी
मनभावती के मुख पान की लाली॥

सीलभरे सरस सरोज छबि छीने लेत,
मीन - मृग - खंज - मान - गंजन मरोरदार।
नेह सरसीले अरसीले भाव - दरसीले,
परसीले परम रसीले रंग बोरदार।

चोरदार चित के चलाक हित जोरदार,
कोरदार सेखर अरुन बर डोरदार।
दौरदार दीरघ दिमाक भरे, प्रानप्यारी,
ताकि दै री तनक तिहारे नैन तोरदार॥

कारे सटकारे चारु चीकने चमकदार,
चित चकचौधत निहारि चख थहरैं।
कोमल बिमल रुचि सरस रुचिर राजैं,
सहज सुभायन सुगन्धन की लहरैं।
सेखर छजत छूटे केस कंजलोचनी के,
गोरे-गोरे गातन अनूप छबि छहरैं।
दच्छ विधि प्रगट प्रतच्छ करि दीने मनो,
सावन के स्वच्छ उमैं पच्छ एक ठहरैं॥

कैधौ घर्यो आपही उतारि रङ्गभूमि तामै,
मैन की कमान को अनूप गुन-ओज सो।
कैधौ मिल्यो मन मैं उमाह करि राहु ताहि,
लाइ लीन्यो उर सो मयक मन मौज सो।
रेख तम-सार की, कुमार चारु पन्नगी को
पीवत सुधा को सिर सेखर सरोज सों।
गोरे मुख भावती के अलक अरूझी किधौ,
छलकै सिंगाररस - धार हेम हौज सों॥

पन्नन के पात में प्रबालन की पाँति ता पै,
पदिक की पाँति की प्रभा-सी अभिलाषी है।
कैधों कालिंदी में बह्यौ वानी को प्रवाह चाहि,
ता में भली कुन्द की कली-सी गहि नाखी है।
पाटी पारि प्यारी की सँवारि माँग सेंदुर सों,
तामैं मंजु मुकतावली यो रचि राखी है।
तमोगुन रासि में रजोगुन की रेख मानों,
तामैं लिखी सुरुचि सतोगुन की साखी है॥

भूतन की प्रीति है कि नीति अविवेकिन की ,
कायर की जीत है की भीति असिधारी की ।
गनिका को नेह किधौं दामिनि की देह कैधों ,
कामिनी को मान बानि काम-उर-वारी की ।
सेखर पलास के प्रसून की सुगन्ध कैधौ ,
सील कुलटानि को कि सत्य व्यभिचारी की ।
पाहन को पंक है कि अंक को अकार किधौ ,
रंकन को दान है कि लंक प्रानप्यारी की ॥

जावक दिये ते और अरुन लखे मैं ,
ये तो सहज स्वभाव हीं अलौकिक अरुन हैं ।
कोमल बिमल मजु कंज-से कहत नीके ,
फीके से लगत मुख उपमा बरन हैं ।
पल्लव पुनीत टटके से वटके से कहै ,
सेखर न तेऊ रस - रंचक धरन है ।
रसभरे रगभरे सरस उमगभरे ,
भावती के मृदुल मनोहर चरन है ॥

सहज सुभाइन सों भामती सहेलिन में ,
सोहत सरूप रासि कंचन-सो गात है ।
सकल सिंगार साज, सहित उमग भरी ,
जोबन-तरग सील-सोभा सरसात है ।
गुरुजंन गेह के सोवाय कै सिधारी तहाँ ,
बैठो जहँ सेखर पियारो सुखदात है ।
बाढ़ौ अति प्रेम को पयोनिधि अथाह ,
तामें लाज-भरो मदन-जहाज चलो जात है ॥

प्रान-प्यारी आलिनि, प्रधान प्यारी प्रीतम की ,
ठानि न्यारी मिलन निकुंज-गेह मन में ।
साज सोहै सील मे समाज सोहै सजी सग ,
लाज [illegible] स, बिलास सोहै तन में ।

आस-भरी सेखर हुलास भरी देखी तहाँ,
सेज परी सूनी ह्वै अचेत परी छन में।
नीर छायो नैनन, अधीर छायो बैनन में,
पीर छायी अंगन, समीर छायो बन में॥

रस मे बिबस ह्वै कै सेखर बिताई रात,
लागे रति-चिन्ह, चारु अगन अछेह सों।
परत न सूधे पग, आलस-बलित बेस,
आवत बिलोकि और भांमती के गेह सों।
आदर सो उठि कै सहेलिन सो आगें जाइ,
लागे उर दागन दुराए निज देह सों।
धूर - भरे प्रीतम के चरन सरोज प्यारी
पोछे निज अचल के छोरन सनेह सों॥

अरुन उदोत आयो करिकै बिहार हेरि,
उपट्यौ हिए मे हार, हारे रग रति के।
मान ठानि बैठी, तानि भृकुटी कमान चारु,
लाल भए लोचन लजीले बंक गति के।
सेखर समीप जाइ सकुचि सँभारे स्याम,
रग भरे बसन लली के प्रीति अति के।
उमगि अनंद अनुरागी अति प्रेम भरी,
लागी उर ललकि सलोनी प्रानपति के॥

—:०:—

पजनेस

नवला सरूप रूप रावरे रुचिर रूप,
रचना बिरंचि कीन सकुचन लागी है।
भन पजनेस लोल लोयन की लीकैं गोल,
गुलफ गोराई लाज सकुचन लागी है।
सुन्दर सुजान सुखदान प्रीत प्रीतम की,
एकौ ना परेख अबै सकुचन लागी है।
औचक उचन लागी कंचुकी रुचन लागी,
सकुचन लागी आली सकुचन लागी है॥

चितवत जाकी ओर चख चकिचौंधे कौंधे,
भनि पजनेस भानु-किरन खरी-सी है।
छबि प्रतिबिम्ब छुट्यो छित ह्वै छपाकर ते,
छाजत छबीली राजै कनक-छरी-सी है।
कीन्ह्यो डर लुरुक गुलाब को प्रसून ग्रास,
झुकि-झुकि झूमि-झूमि झाँकत परी-सी है।
आनन अमल अरविन्द ते अमन्द अति,
अद्भुत अभूत आभा उफनि परी-सी है॥

कोटि मारतंड चंड मंडित मुकुट क्रीट,
कुंडल कलित अलकावली भुजै गई।
पजन प्रतच्छ मुकताहल त्रिभंग रंग,
रंगित जरीकी पीति पटकन लै गई।
झलक झलामली सी झाँकी-सी झपाके चित्त,
चित्त ते निकरि मेरे दृग मैं ह्वितै गई।
दृगन ते दौरि मन, मन ते तमाम तन,
तन ते ततच्छ रोम-रोम छबि छै गई॥

कैधौं भौंर पर्‌यो है प्रिया के रूप-सागर में ,
कैधौं तन पजनेस भासत गोपाल को ।
कैधौं शशि-अंक मैं कलंक शशिता के संग ,
कैधों मुख-पंकज पै बैटो अलि - बालको ।
कैधौं शुक्लपक्ष के समीप परिवा को जान ,
कैधौं ऋतुराज आज पायो जस काल को ।
दरकि सुमेर फेरि पूरन खसी ना सीधो ,
मोहनी को टोना कै डिठौना बाल-भाल को ।।

सपुट सरोज कैधौ सोभा के सरोवर में ,
लसत सिगार के निशान अधिकारी के ।
कवि पजनेस लोल चित्त-वित्त चोरिबे को ,
चोर इक ठौर नारि ग्रीव वर कारी के ।
मन्दिर मनोज के ललित कुम्भ कचन के ,
ललित फलित कैधौ श्रीफल बिहारी के ।
उरज उठौना चक्रवाहन के छौना कैधौं ,
मदन - खिलौना ई सलौना प्रान-प्यारी के ।।

किरनि सी कढ़ि आई अंगना उघरि गात ,
कवि पजनेस छैल छिति पै छहार गो ।
उझकि झपाक मुख फेरि प्यारे रुख ओर ,
हेरि हरि हरखि हिमचल पै अरि गो ।
आधो मुख मलत अबीर ते मुकेस हाय ,
नखरेख-चिह्नित उरोजन पै झरि गो ।
मानो अर्ध-चन्द्र को प्रकास अर्ध-चन्द्रिका पै ,
चन्द्र-चूर ह्वै कै चन्द्रचूर पै बगरिगो ।।

चौकि चकी उझकी सी छकी जकी ,
छीजि निरीछनि लागी छुपावन ।
पूरी विथा विधि आधी उसास लै ,
चेत कियो चित चेत सोहावन ।

यों मन में 'कहि कैं पजनेस,
हमैं उन्है केतो चहै मनभावन।
हा सुथरी पुतरी सी परी,
उतरी चुरी चूमि लगी चटकावन ॥

प्यारी रतिरंग सफजंग जीति बैठी प्रात,
अंग सुभटन को इनाम बकसत है।
आँगी दई कुचन भुजन बाजूबन्द दई,
नूपुर पगन बेनी भाल सरसत है।
कवि पजनेस नैन अजन अधर बीरी,
जंघन दुकूल कर्नफूल बरसत है।
पीछे परे जान तान भोंहन कटाछन तैं
बार - बार बन्धन तैं बारन कसत है ॥

बिधु कैसी कला वधू गैलन मे,
गसी ठाढो गोपाल जहाँ जुरिगो।
पजनेस प्रभाभरी भामिनि पैं,
घने फाग के फैलनि सों फुरिगो।
मुरकी रुको बंक बिलोकत लाल
गुलाल मैं बेंदा सबै पुरिगो।
दिग में दरस्यो है दिनेस मनो,
दिगदाह की दीपति में दुरगो ॥

—:००:—

द्विजदेव

डोल रहे विकसे तरु एकै,
सु एकै रहे है नवाइ कै सीसहिं।
त्यौं 'द्विजदेव' मरद के व्जाज सों,
एकै अनंद के आँसू बरीसहिं।
कौन कहैं उपमा तिनकी,
जे लहैई सबै विधि संपति दीसहिं।
तैसेई ह्वै अनुराग भरे,
कर-पल्लव जोरि कै एकै असीसहिं॥

औरै भाँति कोकिल, चकोर ठौर-ठौर बोले,
औरै भाँति सवद पपीहन के वै गए।
औरै भाँति पल्लव लिए है वृन्द-वृन्द तरु,
औरै छवि-पुंज कुज-कुजन उनै गए।
औरै भाँति सीतल, सुगंध मद डोलै पौन,
'द्विजदेव' देखत न ऐसै पल द्वै गए।
औरै रति, औरैं रंग, औरै साज औरै संग,
औरै बन, औरै छन, औरै मन ह्वै गए॥

सुर ही के भार सूधे - सवद सु कीरन के,
मदिरन त्यागि रहै अनत कहूँ न गौन।
'द्विजदेव' त्यौं ही मधु-भारन अपारन सौ,
नैकु झुकि-झूमि रहे मोंगरे मरुअदौन।
खोलि इन नैननि निहारौ-तौं-निहारौ कहा,
सुखमा अभूत छाइ रही प्रति भौनै भौन।
चाँदनी के भारन दिखात उनयौ सौ चंद,
गध ही के भारन वहत मंद-मंद पौन॥

गुंजरन लागी भौंर-भौरे केलिकुंजन में,
क्वैलिया के मुख तै कुहूँकनि कढ़ै लगी।
'द्विजदेव' तैसै कछु गहब गुलाबन तैं,
चहकि चहूँधाँ चटकाहट बढ़ै लगी।
लाग्यौ सरसावन मनोज निज ओज,
रति बिरही सतावन की बतियाँ गढ़ै लगी।
हौंन लागी प्रीति-रीति बहुरि नई सी,
नव - नेह उनई सी मति मोह सौ मढ़ै लगी॥

होते हरे नव अकुर की छबि,
छार कछारन में अनियारी।
त्यौं 'द्विजदेव' कदंबन गुच्छ,
नए - ई - नए उनए सुखकारी।
कीजिये बेगि सनाथ उन्हें,
चलिऐ बन - कुंजन कुंजबिहारी।
पाबस - काल के मेघ नए,
नव नेह नई बृषभानु कुमारी॥

चूनरी सुरंग सजि सोंही अंग अंगनि,
उमंगनि अनग-अंगना लौ उमहति हैं।
झुकि झुकि झाँकति झरोखन तै कारी घटा,
चौहरे अटा पैं बिज्जु-छटा-सी जगति हैं।
'द्विजदेव' सुनि सुनि सबद पपीहरा के,
पुनि पुनि - आँनद पियूष में पगति हैं।
चावन-चुभी-सीं मन-भावन के अंक तिन्हैं,
सावन की बूदैं ए सुहावनी लगति है॥

गावौ किन कोकिल, बजावौ किन बैनु-बैनु,
नचौ किन झूँमरि लतागन बने ठने।
फैंकि फैंकि मारौ किन निज कर-पल्लव सौं,
ललित लवंग फूल पातन घने घने।

फूल-माल धारी किन, सौरभ सँवारी किन,
एहो परिचारक समीर सुख सौं सने।
मौर-धरि बैठौ किन चतुर रसाल! आज,
आवत बसंत ऋतुराज तुम्हें देखने॥

सॉवन के द्विवस सुहावने सलौने स्याम,
जीति रति समर बिराजे स्यामा-स्याम संग।
'द्विजदेव' की सौ तन उघटि चेंहूधाँ रह्यौ,
चुबन कौ चहल चुचात चूनरी कौ रग।
पीत पट ताते हरखाने लपटाने लखें,
उमहि-उमहि घनस्याम-दामिनी कौ ढग।
रति-रन मीजे पै न मैन-मद छीजे, अति
रस-बस भीजे तन पुलकि पसीजे अंग॥

फेरि वैसै सुरभि-समीर सरसान लागे,
फेरि वैसै बेलि मधु-भारन उनै गई।
फेरि वैसै चाह कै चकोर चहुँ बोले फेरि,
फेरि वैसी क्वैलिया की कूकनि चहूँ भई।
'द्विजदेव' फेरि वैसै गुनी भौर-भीरैं फेरि,
वैसौ ही समय आयौ आनँद सुधामयी।
फेरि वैसै अगन उमंग अधिकाने,
फेरि, वैसैं ही कछूक मति मेरी भोरी ह्वै गई॥

बहि हारे सीतल सुगधित समीर धीर,
कहि हारे कोकिल सँदेसे पंच बान के।
साधन अगाधन बिसानी ना कछूक जोपै,
कौन गनैं भेद पग - सीस - दान-मान के।
'द्विजदेव' की सौ कछु मित्र के बिछोहै-काल,
देखि सकुचाँने दृग - अंबुज अयान के।
भाजौई भभरि सो तो मान-मधुकर आली,
आज ब्याज - कज्जल - कलित-अँसुवान के॥

धूँधुरित धूरि धुरवाँन की सु छाई नभ,
जलधर-धारा धरा परसन लागी री।
'द्विजदेव' हरी-भरी ललित कछारैं त्यौं,
कदंबन की डारै रस बरसन लागी री।
कालि ही तैं देखि बन-बेलिन की बनक,
नवेलिन की मति अति-अरसन लागी री।
वेगि लिखि पाती वा सँघाती मनमोहन कौ,
पावस अवाती ब्रज-दरसन लागी री॥

उँमड़ि घुँमड़ि घन छडत अखड धार,
अति ही प्रचड पौन झूँकन बहतु है।
'द्विजदेव' संपा कौ कुलाहल चहूँधाँ नभ,
सैल तैं जलाहल कौ जोग उमहतु है।
बुधि बल थाकौ सोई प्रलैनिसा कौ मेघ,
जानि करि सूनौ बैर आपनौ गहतु है।
ए हो गिरिधारी! राखौ, सरन तिहारी अब,
फेरि इहि बारी ब्रज बूड़न चहतु है॥

'द्विजदेव' जू नैंक न मानी तबै,
बिनती करी बार हजारन की।
इक माखनचोर के जोर लई,
छवि-छीनि सिखी पखवारन की।
लहि उँची उसास बिसूरै कहा,
लखि सैन घनी घन-भारन की।
दिन द्वैक में पैहै सकेलि सबै,
फल बेलि बई जो अँगारन की॥

घहरि-घहरि घन! सघन चहूँधाँ घेरि,
छहरि-छहरि विष बूँद बरसावै ना।
'द्विजदेव' की सौ अब चूकि मत दाँव अरे,
पातकी पपीहातू पिया की धुनि गावै ना।

पै 'द्विजदेव' न जानि पर्‌यो,
धौ कहा तिहि काल परे अँसुवा जगि।
तू जो कहै सखि ! लौनौ सरूप,
सो मो अँखियाँन मे लौनी गई लगि ॥

कारी नभ, कारी निसी, कारिऐ डरारी घटा,
झूकन बहत पौन आँनद को कद री।
'द्विजदेव' साँवरी सलौनी सजी स्याम जू पै
कीन्हौ अभिसार लखि पावस अनंद री।
नागरी गुनागरी सु कैसें डरै रैनि-डर,
जाके सँग सोहै ए सहाइक अमंद री।
बाहन मनोरथ, उँमाहि सँगवारी सखी,
मैन मद सुभट मसाल मुख-चंद री ॥

दाबि-दाबि दंतन अधर-छतवंत करै,
आपने ही पाँइन को आहट सुनति स्रौन।
'द्विजदेव' लेति भरि गातन प्रसेद अलि,
पातहू की खरक जु होती कहूँ काहू भौन।
कंटकित होत अति उससि उसासिन तें,
सहज सुबासन सरीर मंजु लागै पौन।
पंथ ही मै कंत के जु होत यह हाल तो पै,
लाल की मिलनि ह्वै है बाल की दसा धौ कौन ॥

बाँके, सक-हीने, राते-कंज-छबि-छीने, माँते,
झुकि-झुकि झूमि-झूमि काहू कों कछू गनै न।
'द्विजदेव' की सौ ऐसी बनक बनाइ,
बहु-भाँतिन बगारै चित-चाहन चहूँधाँ चैन।
पेखि परे प्रात जौ पै गातन उछाह भरे,
बार-बार तातैं तुम्हैं पूछती कछूक बैन।
एहो ब्रजराज ! मेरे प्रेम-धन लूटिबे कौ,
बीरा खाइ आऐ कितै आपके अनोखे नैन ॥

उत्तर-रीति

सरदार

संग की सहेली रहीं, पूजत अकेली सिवा,
तीर जमुना के बीर चमक चपाई है।
हौं तौ आई भागत डरत हियरा तें घर,
तेरे सोच करि मोंहि सोचत सवाई है।
बचि है बियोगी योगी जन सरदार,
ऐसी कंठ तें कलित कूक कोकिल कढ़ाई है।
विपिन-समाज में दराज सी अवाज होति,
आज महाराज रितुराज की अवाई है॥

थोरी सी वैस किसोरी सबै,
भरि झोरी अबीर उड़ावती हैं।
कर ताल दै ढोलक की धधकी,
धुनि बाँध धमार बजावती है।
सरदार लिएँ मिथिलेस-कुमारि,
उदार ह्वै भाग सरावती हैं।
मुसिक्याय कै नैन नचाय सबै,
रघुनाथै बसत बँधावती हैं॥

साहिब मनोज कौ मुसाहिब बसत अंत,
मर ना गयौ री नाम सुनत नकारे कौ।
ग्रीषम गरूर पूर छायौ लै कृसानु भयौ,
बेद ते अजान, अंग तकत उजारे कौ।
बिन सरदार ना उपाय, अब एक कटै,
तरक तलास लायौ अधम अँध्यारे कौ।
देखि जग जीवननि जीवन कौ नाह,
हाथ जीवन न देत, लेत जीवन हमारे कौ॥

डरौ न अहीरन तें, डगर अथीरन तें,
द्वार जनी चाक-चार कोनन ते धाओ री ।
एक हाथ आछी पिचकारी की अगारी मारि,
एक हाथ ओट राखि आँखिन बचाओ री ।
कवि सरदार आयो बड़ो खिलवार,
ताहि खेल को मचाय रंग-रगन नचाओ री ।
कीरति-कुमारी कही हँसि कै कुमारी गोठ,
ए री गुनवारी, बनवारी बाँधि लाओ री ॥

—:००:—

लछिराम

सामुहे सुमन बरसाइ सुघराई संग,
लछिराम रंग सारदा हू कौ रितै रहै।
छाती में लगाइ सूम थाती - सी कमल कर,
सुकुमारताई कों सराहि दुचितै रहै।
अलक लँबाई, चारु चख चपलाई,
अधरान की ललाई पर हरष हितै रहै।
माई ! मनमोहन, गोराई मुख - मडल पै,
राई नौन बारि घरी चारि लौ चितै रहै॥

पेंजनी कंकन की झनकार सों,
नासिका मोरि मरोरति भौहै।
ठाढी रहै पग द्वैक चलै,
सने स्वेद कपोल कछू उघरौहैं।
यों लछिराम सनेह के संगन,
साँकरे मे पर प्यारी लजौहै।
छाकि रह्यौ रस - रग अभी,
मनमोहन ताकि रह्यौ तिरछौहैं॥

चौसत सिंगार साजि, कीन्हौ अभिसार जाइ,
जोवन बहार रोम रोम सरसत जात।
लछिराम तैसी झनकार पेंजनी की,
कर कंकन खनक चूरी चारु परसत जात।
झरत प्रस्वेद, मुख चूनर सुरंग बीच,
विहँसत मन सारदा को तरसत जात।
दामिनी अमंद सोहें बस रस फंद चंद,
मानों लाल बादर में मोती बरसत जात॥

मौज में आई इतै लछिराम,
लग्यौ मन साँवरो आनँद-कंद में।
सूनो सँकेत निहारत ही,
पर्‌यौ सांवरौ आनन घूँघट बंद में।
बोलिबे कौ अभिलाख रचै,
पै न बोलै कछू दुख-रासि दुचद में।
ह्वै रही रैन-सरोज-सी प्यारी,
परी मनों लाज मनोज के फंद में॥

चटपटी चाह अंग उपटे अनंग के री,
रग रावटी ते काम नट की कुमारी-सी।
कबि लछिराम राज-हंसनि सों मद-मद,
परम प्रकासमान चाँदनी सँवारी-सी।
नागरि निकुंज में न हेर्‌यौ ब्रजचंद,
मुख रुख पै सहेली भई आँखे रतनारी-सी।
भौंहन मरोरति, बिथोरति मुकुत हार,
छोरति छरा के बद, रोष-मद ढारी-सी॥

बदल्यो बसन सो जगत बदलोई करै,
आरस में होत ऐसो या में कहा छल है।
छाप है हरा की कै छपाए हौ हरा को,
छाती भीतर झगा के छाई छबि झलझल है।
लछिराम हौं हू धाय रचिहौं बनक ऐसो,
आँखिन खबाये पान जात क्यों अमल है।
परम सुजान मनरंजन हमारे कहा,
अँजन अधर में लगाये कौन फल है॥

आए कहूँ अनत विहार करि मंदिर में,
सामुहै झमकि छवि दामिनी की छोर है।
आरस-वलित वागौ, मगरजी ढ.लौ पाग,
बदन [illegible] भाल भौहन के कोरै हैं।

भरम खुल्यौ न अंग परसत मोहिनी कौ,
　　लछिराम सान सँग भोहन मरोरैं हैं।
लोचन सुरंग हेरि वाल के सरोष मानौ
　　रंगसाज मदन मजीठ रंग-वोरैं हैं॥

प्रीति रावरे सो करी, परम सुजानि जानि,
　　अब तौ अजान वनि मिलत सवेरे पै।
लछिराम ताहू पै सुरंग ओढनी लै सीस,
　　पीत-पट देत गुजरैटिन के खेरे पै।
सरावोर छलकै प्रस्वेद कन, लाल भाल,
　　मदन मसाल वारी वदन उजेरे पै।
आपुने कलंक सों कलंकिनी वनौ हौ,
　　लूटि और हू को धरत कलक सिर मेरे पै॥

सजल रहत आप औरन को देत ताप,
　　वदलत रूप और वसन वरेजे मे।
ता पर मयूरन के झुंड मतवारे सालै,
　　मदन मरोरै महा झरनि मजेजे मे।
कबि लछिराम रंग साँवरी सनेही पाय,
　　अरजि न मानै हिय हरषि हरेजे में।
गरजि-गरजि विरहीन के विदारै उर,
　　दरद न आवै,धरै दामिनी करेजे में॥

हरिश्चन्द्र

पहिले ही जाय मिले गुन मे श्रवन फेरि,
रूप-सुधा मधि कीनो नैनहू पयान है।
हँसनि नटनि चितवनि मुसुकानि
सुघराई रसिकाई मिलि मति पय पान है।
मोहि मोहि मोहन मई री मन मेरो भयो,
हरिचंद भेद ना परत कछू जान है।
कान्ह भये प्रानमय प्रान भये कान्हमय,
हिय मे न जानी परै कान्ह है कि प्रान है॥

जिय पै जु होइ अधिकार तो बिचार कीजै,
लोक-लाज भलो बुरो भलें निरधारिए।
नैन श्रौन कर पग सबै परबस भये,
उतै चलि जात इन्हें कैसे कै सम्हारिये।
हरिचंद भई सब भाँति सों पराई हम,
इन्हें ज्ञान कहि कहो कैसे कै निबारिये।
मन में रहै जो ताहि दीजिये बिसारि,
मन आपै वसे जामें ताहि कैसे कै बिसारिए॥

बोल्यो करै नूपुर श्रवन के निकट सदा,
रदतल लाल मन मेरे बिहर्‌यो करै।
बाजो करे बंसी धुनि पूरि रोम-रोम मुख,
मन मुकतानि मंद मन ही हँस्यो करै।
हरिचंद चलनि भुरनि बतरानि चित,
छाई रहै छबि जुग दृगन मर्‌यो करै।
प्रानहू ते प्यारौ रहे प्यारौ तू सदाई,
तेरो पीरो पट सदा जिय बीच फहर्‌यो करै॥

देखि घनस्याम घनस्याम की सुरति करि,
जिय में बिरह घटा घहरि-घहरि उठै।
त्यों ही इन्द्रधनु बगमाल देखि बनमाल—
मोतीलर पी की जिय लहरि-लहरि उठै।
हरिचंद मोर पिक धुनि सुनि बंसीनाद,
बांकी छवि बार-बार छहरि-छहरि उठै।
देखि-देखि दामिनि की दुगुन दमक,
पीत-पट-छोर मेरे हिय फहरि-फहरि उठै॥

गुरुजन बरज रहे री बहु बार मोहि,
संक तिनहूँ की छोड़ि प्रेम-रंग-राँचो मैं।
त्यों ही बदनामी लई कुलटा कहाइ कै,
कलंकिनी कहाई ऐसी प्रीति-लीक खाँची मैं।
कहि हरिचद सब छोड़्यो प्रानप्यारे काज,
याते जग झूठो भयो रह्यो एक साँची मैं।
नेह के बजाय बाज छोड़ि सब लाज आज,
घूँघट उघारि ब्रजराज हेत नाची मैं॥

हौं तो याही सोच में विचारत रही री काहे,
दरपन हाथ ते न छिन विसरत है।
त्योंही हरिचंद जू वियोग औं सयोग दोऊ,
एक से तिहारे कछु लखि न परत है।
जानी आज हम ठकुरानी तेरी बात तू तौ,
परम पुनीत प्रेम-पथ विचरत है।
तेरे नैन मूरति पियारे की बसत ताहि,
आरसी में रैन दिन देखिबो करत है॥

पिया प्यारे बिना यह माधुरी मूरति,
औरन को अब पेखिये का।
सुख छाँड़ि कै संगम को तुमरे,
इन तुच्छन को अब लेखिये का।

हरिचंद जू हीरन को बेवबहार कै,
काँचन कौ ले परेखिये का।
जिन आँखिन में तुव रूप बस्यो,
उन आँखिन सों अब देखिये का॥

सुनी है पुरातन में द्विज के मुखन बात,
तोहि देखै अपजस होत ही अचूक है।
तासो हरिचद करि दरसन तेरो जिय
मेट्यो चाहै कठिन मनोभव की हूक है।
ऐसो करि मोहि सबै प्यारे नँदनँद जू सों
मिलि कहै लावै मुख सौतिन के लूक है।
गोकुल के चद जू सों लागै जो कलंक तौ तू
साँचो चौथ-चंद ना तो बादर को टूक है॥

साज्यो साज गाँव मिलि तीज के हिंडोरना को,
तानि कै बितान खासो फरस बिछायो री।
आवै मिलि गोपी ता पै भीजि झुंड झुंड,
काम-छाप सी लगावैं गावै गीत मन-भायो री।
मोहि जानि पाछे परी देरी तै दया कै
हरिचंद अंक लैके लाल छिपि पहुँचायो री।
जानि गई ताहू पै चवाहनै गजब देखे,
पाँय बिनु पंक के कलंक मोहिं लायो री॥

रंग-भौन पीतम उमग भरि बैठ्यो आज,
साजै रति-साज पूर्यो मदन उमाह मैं।
हरिचंद रीझत रिझावत हँसावत—
हँसत रस बाढ़यो अति प्रेम के प्रवाह मैं।
बीरी देन मिस छुए आंगुरी अधर पुनि,
चूमै चुपचाप ताहि पान-खान-चाह मैं।
लाजहि छुड़ावत छकावत छकत छवि,
छावत छबीलो छैल-छल के उछाह मैं॥

आजु व्रषभानुराय पौरी होरी होय रही,
दौरी हैं किसोरी सबै जोवन चढ़ाई मैं।
खेलत गोपाल हरिचंद राधिका के साथ,
बुक्का एक सोहत कपोल की लुनाई मैं।
कैधौं भयो उदित मयंक नभ-बीच कैधौ,
हीरा जर्‌यो बीच नीलमनि की जराई मैं।
कैधौ पर्‌यो कालिंदी के नीर माँहि छीर कैधौ,
गरक सु गोरी भई स्याम सुंदराई मैं॥

खेलौ मिलि होरी ढोरो केसर, कमोरी फैंको,
भरि-भरि झोरी लाज जिअ में बिचारौ ना।
डारौ सबै रंग संग चंग हू बजाओ गाओ,
सबन रिझाओ सरसाओ सक धारौ ना।
कहत निहोरि कर जोरि हरिचंद प्यारे,
मेरी बिनती है एक हाहा ताहि टारौ ना।
नैन हैं चकोर मुख-चंद तें परैगी ओट,
यातें इन आँखिन गुलाल लाल डारौ ना॥

राखत नैनन में हिय में भरि,
दूर भए छिन होत अचेत है।
सौतिन की कहै कौन कथा,
तसवीर हू सों सतराति सहेत है।
लाग भरी अनुराग भरी,
हरिचंद सबै रस आपुहि लेत है।
रूप सुधा इकली ही पियै,
पिय हू को न आरसी देखन देत है॥

हौं तो तिहारै दिखाइबे के हित,
जागत ही रही नैन उजार-सी।
आए न राति पिया हरिचन्द,
लिए कर भोर लौ हौं रही भार-सी।

है यह हीरन सों जड़ी,
रंगन तापै करी कछु चित्र चितार-सी।
देखो जू लालन कैसी बनी है,
नई यह सुन्दर कंचन-आरसी॥

हौं तो तिहारै सुखी सों सुखी,
सुख सों जहाँ चाहिए रैन बिताइये।
पै बिनती इतनी हरिचन्द,
न रूठि गरीब पै भौंह चढ़ाइये।
एक मतो क्यों कियो तुम सों तिन,
सोऊ न आवै न आप जो आइये।
रूसिबे सों पिय प्यारे तिहारै,
दिवाकर रूसत है क्यों बताइये॥

आई आज कित अकुलाई अलसाई प्रात,
रीसै मति पूछै बात रंग कित ढरिगो।
सोनै से या गात छवै कै सोनो भयो आप, कै वा
आतप प्रभात ही को प्रगट पसरिगो।
हरिचंद सौतिन की मुख-दुति छीनी कै वा,
आपनो बरन कहुँ पाय धाय ररिगो।
नील पट तेरो आज औरै रंग भयो काहे,
मेरे जान बिछुरि पिया तें पीरो परिगो॥

रोकहिं जो तों अमंगल होय,
औ प्रेम नसै जो कहै पिय जाइये।
जौ कहैं जाहु न तौ प्रभुता,
जौ कछू न कहै तो सनेह नसाइए।
जौ हरिचंद कहैं तुमरे बिन जी है न,
तो यह क्यों पतिआइए।
तासौं पयान समै तुमरे हम,
का कहैं आपै हमैं समझाइए॥

मैं बृषभानुपुरा की निवासिनि,
मेरी रहै बृज वीथिन भाँवरी।
एक सँदेसो कहों तुम सों,
पै सुनो जौ करो कछू ताको उपाव री।
जो हरिचंद जू कुंजन में मिलि
जाहि करी लखि कै तुम बावरी।
बूझी है वाने दया करिकै कहिये,
परसौ कव होयगी रावरी॥

हाय दसा यह कासो कहौं,
कोउ नाहिं सुनै जौ करै हूँ निहोरन।
कोऊ बचावनहारो नही,
हरिचंद जू यों तो हितू है करोरन।
सो सुधि कै गिरिधारन की अब,
धाइ कै दूर करौ इन चोरन।
प्यारे तिहारे निवास की ठौर को,
बोरत है अँसुआ बरजोरन॥

रोवै सदा नित की दुखिया बनि,
ये अँखियाँ जिहि द्योस सों लागी।
रूप दिखाओ इन्हें कबहूँ,
हरिचंद जू जानि महा अनुरागी।
मानिहै औरन सों नहिं ये,
तुव रंग-रँगी कुल लाजहि त्यागी।
आँसुन को अपने अँचरान सों,
लालन पौछि करौ वड़ - भागी॥

आजु लौं जौ न मिलै तो कहा,
हम तो तुमरे सब भाँति कहावै।
मेरो उराहनो है कछु नाहिं,
सबै फल आपुने भाग को पावैं।

जो हरिचंद भई सो भई,
अब प्रान चलै चहैं तासों सुनावैं।
प्यारे जू है जग की यह रीति,
बिदा की समै सब कंठ लगावैं ॥

अब प्रीति करी तो निबाह करौं,
अपने जन सों मुख मोरिये ना।
तुम तो सब जानत नेह मजा,
अब प्रीति कहूँ फिरि जोरिये ना।
हरिचंद कहै कर जोरि यही,
यह आस लगी तेहि तोरिये ना।
जिन नैनन माँहि बसौ नित ही,
तिन आँसुन सों अब बोरिए ना ॥

इन दुखियान को न चैन सपने हुँ मिल्यो
तासों सदा व्याकुल बिकल अकुलायँगी।
प्यारे हरिचन्द जू की बीती जान औध
प्रान चाहत चले पै ये तो संग ना समायँगी।
देख्यो एक बार हू न नैन भरि तोहि यातें
जौन जौन लोक जैहें तहाँ पछतायँगी।
बिना प्रान-प्यारे भये दरस तुम्हारे हाय
मरे हू पै आँख ये खुली ही रहि जायँगी ॥

मन मोहन तें बिछुरी जब सों
तन आँसुन सों सदा धोवती हैं।
हरिचन्द जो प्रेम के फन्द परीं
कुल की कुल लाजहिं खोवतीं हैं।
दुख के दिन कों कोउ भाँति बितै
बिरहागम रैन सँजोवती हैं।
हम ही अपनी दसा जानै सखी
निसि सोवती हैं किधौं रोवती हैं ॥

पीरो तन पर्‌यो फूली सरसो सरस सोई
मन मुरझानो पतझार मानौ लाई है।
सीरी स्वाँस त्रिबिध समीर-सी बहति सदा
अँखियाँ बरसि मधु झरि-सी लगाई है।
हरिचन्द फूले मन मैन के मसूसन सों
ताही सों रसाल बाल बदि कै बोराई है।
तेरे बिछुरे ते प्रान कन्त के हिमन्त अन्त
तेरी प्रेम-जोगिनि बसन्त बनि आई है॥

कूकै लगी कोइलै कदवन पै बैठि फेरि
धोए धोए पात हिलि-हिलि सरसै लगे।
बोलै लगे दादुर मयूर लगे नाचै फेरि
देख कै सजोगी-जन-हिय हरसै लगे॥
हरी भई भूमि सीरी पवन चलन लागी
लखि हरिचन्द फेर प्रान तरसै लगे।
फेरि झूमि-झूमि बरषा की ऋतु आई फेरि
बादर निगोरे झुकि-झुकि बरसै लगे॥

घेरि-घेरि घन आए, छाए रहे चहुँ ओर
कौन हेत प्राननाथ सुरति बिसारी है।
दामिनी दमक जैसी जुगनूं चमक तैसी
नभ में बिशाल बग पंगति सँवारी है।
ऐसी समै हरिचन्द धीर न धरत नेकु
विरह-बिथा ते होत व्याकुल पियारी है।
प्रीतम पियारे नन्दलाल बिनु हाय यह
सावन की रात किधौ द्रोपदी की सारी है॥

सिसुताई अजों न गई तन ते,
तऊ जोबन जोति बटोरै लगी।
सुनिकै चरचा हरिचन्द की,
कान कछूक दै भौह मरोरै लगी।

बचि सासु जेठानिन सौं पिय तैं,
दुरि घूँघट मे दृग जोरै लगी।
दुलही उलही सब अगन तैं,
दिन द्वै तैं पियूष निचोरै लगी॥

आई गुरु लोग सग न्यौते ब्रज गाँव,
नई दुलही सुहाई शोभा अंगन सनी रही।
पूछे मन-मोहन बतायो सखियन यह
सोई राधा प्यारी बृखभानु की जनी रही।
हरिचन्द पास जाय प्यारो ललचायो,
दीठ लाज की धँसी सो मानो हीर की अनी रही।
देखो अन-देखो देखो आधो मुख आय तऊ
आधो मुख देखिबे की हौस ही बनी रही॥

सास जेठानिन सौं दबती रहै,
लीने रहै रुख त्यों ननदी को।
दासिन सों सतरात नही,
हरिचन्द करै सनमान सखी को।
पीय कों दच्छिन जानि न दूसत,
चौगुनो चाउ बढ़ै या लली को।
सौतिन हू को असीसै, सुहाग करै
कर आपने सेंदुर टीको॥

—:००:—

रत्नाकर

सो तौ करै कलित प्रकास कला सोरह लौ ,
यामैं वास ललित कलानि चौगुनी कौ है ।
कहै 'रतनाकर' सुधाकर कहावै वह ,
याहि लखै लगत सुधा को स्वाद फीकौ है ।
समता सुधारि औ बिसमता विचारि नीकै ,
ताहि उर धारि जो बिसद ब्रज - टीकौ है ।
चारु चाँदनी कौ नीकौ नायक निहारि कहौ ,
चाँदनी कौ नीकौ कै हमारौ चाँद नीकौ है ॥

जगर - मगर ज्योति जागति जवाहिर की ,
पाइ प्रतिबिंब - ओप आनन - उजारी की ।
छवि 'रतनाकर' की तरल तरंगनि पै ,
मानौ जगाजोति होति स्वच्छ सुधाधारी की ।
संग मे सखी - गन के जोवन - उमग - भरी ,
निरखति सोभा हाट - बाट की तयारी की ।
जित जित जाति बृखभानु की दुलारी फबी ,
तित तित जाति दबी दीपति दिवारी की ॥

संग मे तरैयनि के राका रजनीस चारु ,
छौहरे अटा पै छटा बलित बिराज्यौ है ।
कहै 'रतनाकर' निहारि सो नवेली निज ,
आनन सौ करन मिलान व्यौंत साज्यौ है ।
सग लै सयानि सखियानि नियरान चली ,
पग - पग नूपुर निनाद मग बाज्यौ है ;
ज्यों ज्यों मंद - मद चढी आवति गरूर बढी ,
त्यौं त्यों मद-चूर चंद दूरि जात भाज्यौ है ॥

एक ही साँचौ स्वरूप अनूप है,
खाँचौ यहै मन एक लकीरैं।
त्यौं 'रतनाकर' सेस कौ भेस,
असेस लसै भ्रम की भरी भीरैं।
ता बिनु और जो देखि परै,
थिति ताकी सुनौ औ गुनौ धरि धीरै।
लोचन द्वैतता दोष लगै
यह एक तै ह्वै गई द्वै तसबीरै॥

नागरी नबेली अरबिंद-मुखी चोप चढ़ी,
कढ़ी जमुना सौ जल बाहरि अन्हाइ कै।
झीनौ नीर भीनौ चीर लपट्यौ सरीर माहि,
परत न पेखि तन पानिप समाइ कै।
लाल ललचौंहै तहाँ सौंहै आनि ठाढ़े भए,
हेरत हँसौहैं अग-अगनि लुभाइ कै।
कर उर ऊरनि दै झुकि सकुचाइ फेरि,
धार जमुना मै धँसी मुरि मुसुकाइ कै॥

दुख सुख रावरे हमारे ह्वै रहे है एक,
सारे भेद भाव के पसारै दरे देत है।
कहै रतनाकर तिहारे कजरारे ओंठ,
कालकूट नैननि हमारै धरे देत हैं।
जावक के दाग रहे जागि रावरै जो भाल,
सो तो मम अंतर अँगारै भरे देत है।
कठिन करारे कुच उर जो तिहारे अरे,
हिय मै हमारे सो दरारै करे देत हैं॥

ज्यौ भरि कै जल तीर धरी,
निरख्यो त्यौ अधीर ह्वै न्हात कन्हाई।
जानै नही तिहि ताकनि मे,
रतनाकर कीनी कहा टुनहाई।

छाई कछू हरुवाई सरीर कै,
नीर मै आई कछू भरुवाई।
नागरी की नित की जो सधी,
सोई गागरी आजु उठै न उठाई ॥

ननद जिठानी सास सखिनि सयानी मध्य,
बैठी हुती बाल अलबेली जहाँ आई कै।
कहै रतनाकर सुजान मनमोहन हूँ,
आए ललचाइ तहाँ कछु मिस ठाइ कै।
चहत बनै न भरि लोचन दुहूँ सौ अरु,
रहत बनै न नार नैसुक नवाइ कै।
दुरि दुरि औरनि सो जुरि जुरि तीरनि सौ,
घुरि घुरि जात नैन मुरि मुसकाइ कै ॥

बैठे बन विकल विसूरत गुपाल जहाँ,
औचक तहाँई बाल जोगी इक आइगे।
कह्यौ रतनाकर उपाय हम ठानै कछु,
जानै जदि कापै आज एतिक लुभाइगे।
ताही छन छाइगे छलक इत आँसू नैन,
बैन उत आवत गरे लौ बिरुझाइगे।
पाइगे न जानै कहा मरम दुहूँ के दुहूँ,
हँसि सकुचाइ धाइ हिय लपटाइगे ॥

देखत हमारी हूँ दसा न इठिलानि माहि,
आपनी तौ बानि ना बिलोकत अठानि मैं।
कहै रतनाकर उपाइ न बसाइ कछू,
जासौ लखौ भाइ भेद उभय दसानि मैं।
पावतौ कहूँ जौ कोऊ चतुर चितेरौ तौ,
दिखावतौ सुभाव सोधि कलित कलानि मैं।
रिझवन-आतुरी हमारी अँखियानि माहिं,
खिझवनि-चातुरी तिहारी मुसकानि मैं ॥

जब तें रची है रूप रावरे रसिकलाल,
तब तै बनी है बाल बात बरकत की।
कहै रतनाकर रही है रुचि नैननि मैं,
मीन-मुख मंजुल मुकुत ढरकत की।
आठौ जाम बाम मग जोहत मृगी-सी जब,
चौके पाय आहट तिनूका खरकत की।
अनुराग-रजित अजाज सौ कढ़त स्याम,
मानिक तै मानहु मरीचि मरकत की॥

औचक अकेले मिले कुज रस-पुंज दोऊ,
भौचक भए औ सुधि-बुधि सब ख्वै गई।
कहै रतनाकर त्यौ बानक बिचित्र बन्यौ,
चित्र की सी पलकै सुभौहनि मैं प्वै गई।
नैननि मैं नैननि के बिंब प्रतिबिंबनि सौं,
दोऊ ओर नैननि की पाँति बँधि द्वै गईं।
दोउन कौं दोउनि के रूप लखिबै कौ मनौ,
चार आँख होत ही हजार आँख ह्वै गई॥

राँच्यौ रति-जाग नींद सौपि कै हमारै भाग,
सो तौ सोध आप ही झपकि ठहि देत है।
बाढ़ै उहि प्यारी मुख मजुल सुधाकर सौ,
रस रतनाकर को थाह थहि देत है।
पानिप के अमल अगार सुख-सार तऊ,
लाइ उर दुसह दवारि दहि देत है।
नैन बिन बानी कहि कबिनि बखानी बात,
ये तौ पर सकल कहानी कहि देत है॥

चसकौ परै ना मान-रस कौ कहूँ धौं वाहि,
लीजै बात रंचक विचारि हित हानि की।
कहै रतनाकर तिहारे सुबरन पर,
दमक दुलारी देति तमक तवानि की।

रोष की रुखाई रुख आवत सुसीली होति ,
मंद मुसकानि लै रसीली अँखियानि की ।
होत मृदु मीठे सीठे बचन तिहारे पाइ ,
कंठ-कोमलाई मधुराई अधरानि की ।।

लै लियौ चुम्बन खेलत में कहूँ ,
तापै कहा इतनौं सतरानी ।
होठनि ही मै कछू करि सौहैं ,
वृथा भरि भौंह कमान है तानी ।
लीज़िये फेरि सवेर अवै ,
अवही तौ मिठासहुँ नाहि सिरानी ।
यौ कहि सौहैं कियौ अधरा उन ,
वे तिरछौंहैं चितै मुसकानी ।।

तेरौ रोस रुचिर सचौस हू ह्वै हेरन कौ ,
लागी मन लालसा न नैकुं डगि जाति है ।
कहै रतनाकर रुखाई माहि मान हूँ की ,
सहज सुभाव सरसाई खगि जाति है ।
फीकी चितवन हूँ न नीकी भाँति जानी जाति ,
तामै लोल लोचन लुनाई लगि जाति है ।
कहति कछू जो कटु वानि हूँ अठान ठानि ,
आनि अधरा सों मधुराई पगि जाति है ।।

मान कियौ मोहन मनीसी मन मौज मानि ,
पानि जोरि हारी जव सखियाँ, मन्यौ नही ।
तव बरजोरी करि नवल किसोरी भेस ,
ल्याँई केलि भौन नैकु टेकहिं गन्यौ नहीं ।
प्यारी बनि प्रीतम भुजनि भरि लीन्यौ उन ,
कल छन कीन्यौ वहु जात सु भन्यौ नही ।
प्रथम समागम सो सव ही वन्यौ पै एक
अंक तै छटकि छूटि भाजत वन्यौ नही ।।

दीठि तुम्हें छ्वै छली पलट्यो रँग ,
दीसत साँवरौ साज सबै है ।
है रतनाकर रावरे अंगनि ,
चेटक पेखि प्रतच्छ परै है ।
देति हैं गोरस ठाढ़े रहौ उत ,
रार करै कछु हाथ न ऐहै ।
साँवरे छैल छुवौगे जो मोहिं तो ,
गातनि मेरे गुराई न रैहै ॥

नाक के चढ़ावत पिनाक भौह ढीली परै ,
चढ़त पिनाक भौह नाक मुसुकाइ दै ।
कहै रतनाकर त्यौ ग्रीव हूँ नबाइ लिए
मुख तै टरै न नैन गौरव गवाइ दै ।
अनख बढ़ावत अनग की तरगै बढ़ै ,
धीरज धरा तै प्रन-पायहि उठाइ दै ।
रहति हियै ही हौस हिय की हमारे हाय ,
पैयाँ परौ नैक मान करिबौ सिखाइ दै ॥

गूँथन गुपाल बैठे बेनी बनिता की आप ,
हरित लतानि कुंज माँहि सुख पाइ कै ।
कहै रतनाकर सँवारि निरवारि बार ,
बार बार बिबस बिलोकत बिकाइ कै ।
लाइ उर लेत कबौ फेरि गहि छोर लखैं ,
ऐसे रही ख्यालनि में लालन लुभाय कै ।
कान्ह-गति जानि कै सुजान मन मोद मानि ,
"करत कहा हौ" ? कह्यौ मुरि मुसुकाइ कै ॥

साँवरी राधिका मान कियौ ,
परि पाँइनि गोरे गुविंद मनावत ।
नैन निचौहै रहै उनके नहि ,
बैन बिनै के न ये कहि पावत ।

हारी सखी सिख दै रतनाकर,
आन न भाइ सुभाइ पै छावत।
ठानि न आवत मान उन्हें,
इनकी नहिं मान मनावन आवत॥

नींद लै हमारी हूँ दुनींदे ह्वै सुनींदे सोए,
सुनत पुकार नाहिं परी हौं चहल मैं।
कहै रतनाकर न ऐसो परितीति हुती,
प्रीति-रीति हाय हियै जानी ही सहल मैं।
देखत ही आपने दृगनि हितहानी करी,
अब पछितातिं परी ताहि की दहल मैं।
बीर मैं अजान बलवीरहिं निवास दियौ,
नीर-सिचे बरुनी उसीर के महल मैं॥

जानति हौं जैसे तुम छलके निधान कान्ह,
ताहू पर मोहिं प्रेम-पूरन पगे लगौ।
कहै रतनाकर कपोलनि लै पीक-लीक,
मोकौं तुम मेरे अनुरागहि रँगे लगौ।
जैसैं दरपन मैं दिखात उलटौई सब,
सूधौ पर जानि जात जब लखिबै लगौ।
मेरे मन-मुकुर अमल स्वच्छ माहिं त्यौं ही,
कपट किए हूँ प्यारे निपट भले लगौ॥

जमुना कछारनि पै बग-द्रुम-डारनि पै,
और कछू मंजु मधुराई फिरि जाति है।
कहै रतनाकर त्यौं नगर-अगारनि पै,
बारनि पै बनक निकाई फिरि जाति है॥
नर-पसु पच्छिनि की चरचा चलावै कौन,
पौन-गौनहू मैं सरसाई फिरि जाति है।
जहाँ जहाँ बाँसुरी बजावत कन्हाई बीर,
तहाँ तहाँ मदन-दुहाई फिरि जाति है॥

बीति जाति बातिन मै सुखत सँजोग राति ,
अंतर थिरात नाहिं साँझ औ सवेरे मैं ।
कहै रतनाकर कुलिस-हिय-धारी भारी ,
करत अकाज आप नास हू ह्वै हेरे मैं ।
मिलि घनस्याम सौ तमकि जौ बियोग माहिं ,
चमकि चमक उपजाई उर मेरे मैं ।
ताके बदले कौ दुख दुसह विचारि आज ,
गरक गई ह्वै मनौ बीजुरी अँधेरे मैं ।

आइ अठखेलनि सौं अमित उमंग भरै ,
जिनके प्रसंग सौ तरुनि-अंग थहरै ।
जीवन जुडावै रस-धाम रतनाकर कौ ,
मानस मै जिनसौ तरग मंजु ढहरैं ।
अंग लागि मेरैं बिन बाधक सुखेन सोई ,
ऐसी कब भाग-पुंज होहिं कुंज डहरै ।
दंद हरै हीतल कौ, कौन नँद-नद ? नाहिं ,
सीतल सुगध मंद मारुत की लहरैं ।

सोई फूल सूल से भए है सुख - मूल अबै ,
ताप-प्रद चदन अनंद-कंद ही भयौ ।
कहै रतनाकर जो फनि-फुतकार हुतौ ,
सब सुखसार मलयानिल वही भयौ ।
छरकि हमारे बाम अंक की फरक ही सो ,
वाम सौ सुदच्छिन प्रभाव सबही भयौ ।
काल्हि ही भयौ हो बीर बिषम बिषाकर कौ ,
आज सो सुधाकर सुधाकर सही भयौ ॥

होरी खेलिवे कौ कढ़ी केसरि कमोरि घोरि ,
उमगति आनँद की तरल तरंग में ।
कहै रतनाकर महर कौं लड़ैती छैल ,
रोकी गैल आनि हुरद्दारनि के संग में ।

मो तन निहारि धारि पिचकी-अधार अंक,
मारी मुसुकाय धारी उरज उतंग मैं।
सोई पिचकारी रँगी सारी लाल रँग माहि,
सोई रँगी अँखियाँ हमारी स्याम-रंग मैं॥

बिरह-बिथा की कथा अकथ अथाह महा,
कहत बनै न जो प्रवीन सुकवीनि सौं।
कहै रतनाकर बुझावन लगे ज्यौं कान्ह,
ऊधौ कौं कहन हेत ब्रज-जुवतीनि सौं।
गहबरि आयौ गरौ भभरि अचानक त्यों,
प्रेम पर्‌यो चपल चुचाइ पुतरीनि सौं।
नैकु कही बैननि, अनेक कही नैननि सौं,
रही सही सोऊ कहि दीनी हिचकीनि सौं॥

प्रेम-भरी कातरता कान्ह की प्रगट होत,
ऊधव अवाइ रहे ज्ञान-ध्यान सरके।
कहै रतनाकर धरा कौ धीर धूरि भयौ,
भूरि भीति भारनि फनिंद-फन करके।
सुर - सुरराज सुद्ध - स्वारथ - सुभाव-सने,
ससय-समाए धाए धाम विधि हर के।
आई फिरि ओप ठाम-ठाम ब्रज-गामनि के
बिरहिन बामनि के बाम अंक फरके॥

आए हौ सिखावन कौ जोग मथुरा तैं,
तौपै, ऊधो ये बियोग के बचन बतरावौ ना।
कहै रतनाकर दया करि दरस दीन्यौ,
दुख दरिबै को, तौ पै अधिक वढावौ ना।
टूक टूक ह्वै है मन-मुकुर हमारौ हाय,
चूकि हूँ कठोर बैन-पाहन चलावौ ना।
एक मनमोहन तौ बसिकै उजार्‌यो मोहिं,
हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना॥

जोगिनि की भोगिनि की विकल बियोगिनि की,
जग मै न जागती जमातै रहि जाइँगी।
कहै रतनाकर न सुख के रहै जो दिन,
तौ ये दुख द्वंद्व की न रातै रहि जाइँगी।
प्रेम-नेम छाँड़ि ज्ञान छेम जो बतावत सो,
भीति ही नहीं तौ कहा छातै रहि जाइँगी।
घातै रहि जाइँगी न कान्ह की कृपा तै इती,
ऊधौ कहिवे कौ वस वातै रहि जाइँगी॥

ढोंग जात्यौ ढरकि परकि उर-सोग जात्यौ,
जोग जात्यौ सरकि सकंप कँखियानि तैं।
कहै रतनाकर न लेखते प्रपच ऐठि,
बैठि धरा लेखते कहूँ धौ नखियानि तैं।
रहते अदेख नाहिं बेष वह देखत हूँ,
देखत हमारी जान मोर पँखियानि तैं।
ऊधौ ब्रह्म ज्ञान कौ बखान करते ना नैकु,
देख लेते कान्ह जौ हमारी अँखियानि तैं॥

चाहत निकारन तिन्है जो उर-अंतर तै,
ताकौ जोग नाहिं जोग-मंतर तिहारे मैं।
कहै रतनाकर बिलग करिबै मैं होति,
नीति विपरीत महा, कहति पुकारे मैं।
ताते तिन्है ल्याइ लाइ हिय तै हमारे वेगि,
सोचिये उपाय फेरि चित्त चेतवारे मैं।
ज्यों ज्यों बसे जात दूरि दूरि प्रिय प्रान-मूरि,
त्यों त्यों धँसे जात मन-मुकुर हमारे मैं॥

थाती राखि रूप की हमारी हाय छाती माहिं,
वाल कौ सँघाती घाती वनि विलगायौ है।
कहै रतनाकर सो सूधौ न्याव ही तौ ऊधौ,
मधुपुरी माहिं जो अरूप सो लखायौ है।

परम अनूप एक कूबरी विरूप छाँड़ि,
रूपवती जुवती न कोऊ मोहि पायौ है।
तातैं तुम्है अब मनभावन सरूप सोई,
हिय तैं हमारे काढि ल्यावन पठायौ है॥

हरि-तन-पानिप के भाजन दृगंचल तें,
उमगि तपन तैं तपाक करि धावै ना।
कहै रतनाकर त्रिलोक - ओक - मंडल मै,
बेगि ब्रह्मद्रव उपद्रव मचावै ना।
हर कौ समेत हर-गिरि के गुमान गारि,
पल मैं पतालपुर पैठन पठावै ना।
फैलै बरसाने मै न रावरी कहानी यह,
बानी कहूँ राधे आधे कान सुनि पावै ना॥

रहति सदाई हरिआई हिय-घायनि मैं,
ऊरध उसास सो झकोर पुरवा की है।
पीव-पीव गोपी पीर-पूरित पुकारति हैं,
सोई रतनाकर पुकार पपिहा की है।
लागी रहै नैननि सौ नीर की झरी औ,
उठै चित में चमक सो चमक चपला की है।
बिनु घनस्याम धाम-धाम ब्रजमंडल मैं,
ऊधौ नित बसति वहार बरसा की है॥

हाल कहा बूझत विहाल परीं बाल सबै,
बसि दिन द्वैक देखि दृगनि सिधाइयौ।
रोग यह कठिन, न ऊधौ कहिबे के जोग,
सूधौ सौ सँदेस याहि तू न ठहराइयौ।
औसर मिलै औ सरताज कछु पूछहि तौ,
कहियौ कछू न दसा देखी सो दिखाइयौ।
आह कै कराहि नैन नीर अवगाहि कछू,
कहिबे कौं चाहि हिचकी लै रहि जाइयौ॥

धाईं जित तित तैं बिदाई हेत ऊधव की,
गोपी भरीं आरति सँभारति न साँसु री।
कहै रतनाकर मयूर - पच्छ कोऊ लिए,
कोऊ गुंज अजली उमाहै प्रेम आँसु री।
भाव-भरी कोऊ लिए रुचिर सजाव दही,
कोऊ मही मजु दाबि दलकति पाँसुरी।
पीत पट नन्द जसुमति नवनीत नयौ,
कीरति - कुमारी सुरवारी दई बाँसुरी॥

कोऊ जोरि हाथ कोऊ नाइ नम्रता सौं माथ,
भाषन की लाख लालसा सौं नहिं जात हैं।
कहै रतनाकर चलत उठि ऊधव के,
कातर ह्वै प्रेम सौं सकल महिं जाति हैं।
सबद न पावत सो भाव उमगावत जो,
ताकि ताकि आनन ठगे-से हठि जात हैं।
रञ्चक हमारी सुनौ रञ्चक हमारी सुनौ,
रञ्चक हमारी सुनौ कहि रहि जात हैं॥

—:oo:—

हरिऔध

मद माती मुदित मयूर-मडली के काज,
पारत पियूख कौन घन की थहर मैं।
मंजु सुर मत्त या कुरङ्गन के हेत कौन,
बेवसी भरत वेनु वधिक-निकर मैं।
हरिऔध होति जो न मोह मैं महानता,
तो बँधत मिलिंद कैसे कज के उदर मैं।
मन कैसे रमत चकोर औ मरालन कौ,
मोदवारे मंजुल मयंक मानसर मैं॥

सरिता-सलिल है बहत कल-कल नाहिं,
खिलखिल हँसि है हुलास-पगो हुलसत।
दारिम-फलत दंत-राजि है निकसि लसि
खोलि मुँह बिकच-सुमन-वृन्द सरसत।
हरिऔध हेरि-हेरि राका-रजनी को हास,
मुदित दिगत है विकास-भरो विलसत।
हँसि-हँसि लोटि-लोटि जात चारु चाँदनी है,
मंजुल मयक अहै मद-मद विहँसत॥

दोऊ दुहूँ चाहें दोऊ दुहुँन सराहै सदा,
दोऊ रहैं लोलुप दुहूँन छबि न्यारी कैं।
एकै भये रहै नैन मन प्रान दोहुँन के,
रसिक बनेई रहैं दोऊ रस-क्यारी कैं।
हरिऔध केवल दिखात द्वै सरीर ही हैं,
नातो भाव दीखै है महेस गिरिवारी कैं।
प्रान-प्यारे चित मैं निवास प्रानप्यारी रखै,
प्रानप्यारो बसत हिये मैं प्रानप्यारी कैं॥

नैन मदमाते बैन कछु अलसाते कढ़ैं,
उर मैं उमंग अधिकाने की दुहाई है।
कंप होत गात ना समात कंचुकी में कुच,
आनन लखात तेरे अजब लुनाई है।
हरिऔध हेतु बीर बावरी बनी-सी डोलै,
धरति न धीर कैसी करति ढिढाई है।
रंग-ढंग दीखे बूझि परत कुरङ्ग-नैनी,
आज तेरे अंगन अनंग की चढ़ाई है॥

बयन सुधा में सनि सनि सरसन लागे,
कान परसन लागे नयन नबेली कैं।
आँगुरी की पोरन में लालिमा दिपन लागी,
गुन गरुआन लागे गरब गहेली कैं।
हरिऔध हेरि हेरि हियरो हरन लागी,
चाहि चितबन लागी कोरक चमेली कैं।
मंजु छबि छिति-तल पर छहरान लागी,
छुअन छवान लागे केस अलबेली कैं॥

कुंज में राजति ही मुख मंजु ते
कै कल कजन की छवि औगुनी।
बात वहै तहाँ तौ लौ भई
नहिं जाहि रही मन माहि कबौ गुनी।

चौकि परी हरिऔध को चाहि,
उमाहि चली बनि आकुल चौगुनी।
नौगुनी चावमयी चपला भई,
लोचन - चंचलता भई सौगुनी॥

मधुराई मनोहरता मुसुकानि मैं,
औचक आइ समानी नई।
रस की बतिआन हूँ मैं हरिऔध,
अनेक गुनी निपुनाई ठई।
मद छाकै छवीली बिलासन हूँ,
सुबिलासिता की वर वेलि वई।
छलकी सी छटा अँखियान परैं,
छवि आननहूँ पै छगूनी छई॥

श्रीफल कहै ते मुख होत सपने हूँ नाहि,
तोख होत हिय मै न कंदुक वखाने से।
कंचन-कलस की कथान को उठावै कौन,
रति को सिधोरा कहे रहत लजाने से।
हरिऔध जामें वसि मत्त मन-भृंग मेरो,
कढत न दीखै अजौं कौन हूँ वहाने से।
सोभा सने सोहै सौहैं ससि लौं सु आनन के,
सरस उरोज ए सरोज सकुचाने से॥

छवि रावरी हेरि छवीली छकी,
सिगरे छल - छन्दन छोरै लगी।
अलकावली लाल तिहारी लखे,
कुल कानि हू ते मुख मोरै लगी।
हरिऔध निहारि कै नैन सुहावनै,
देवन हूँ को निहोरै लगी।
तरुनाई तिहारी निहारि तिया,
उकतान भरी तृन तोरै लगी॥

कान ए कान करैं फिर क्यों,
सुनि तानन ही इन बानि बिगारी।
मोहि गयो मन मोहन पै तो,
भई तब हूँ मन सों मन बारी।
पै हमें बूझि परी ना अजौं,
हरिऔध की सौं बतियाँ यह न्यारी।
बावरी कैसे रँगी रँग लाल मैं
मो अँखियान की पूतरी कारी॥

सूधियै नीकी लगे सब को भला,
बक्रता भौंहन कों कत दीजत।
नूतन लालिमा लाभ किये कत,
गोल कपोल की है छबि छीजत।
चूक परी न चलै हरिऔध पै,
नाहक ही इतनो कत खीजत।
बाल हौं यों ही निहाल भई,
अब लाल कहा अँखियान को कीजत॥

जीवन है सिगरे जग को,
लखि जीवत तेरे ही आनन ओर है।
प्रान है कामिनि को हरिऔध पै,
हेर्‌यो करैं तव आँखिन-कोर है।
भाग है ऐसो तिहारो भटू,
इतनो कत कीजत मान मरोर है।
है घनश्याम पै तेरो पपीहरा,
है ब्रज-चंद पै तेरो चकोर है॥

बैठी हुती मन्दिर में कलित कुरंग नैनी,
जाको लखि काम कामिनी को मान किलिगो।
क्यों हूँ कढ़्यो तहाँ आइ साँवरो छबीलो छैल,
जाको गान तानन ते ताके कान पिलिगो।

मुख खोलि उझकि झरोखे हरिऔध झाँके,
लोक-सुन्दरी को मंजु रूप ऐसो खिलिगो।
नीलिमा गगन मे मगन ह्वै गयो कलक,
आनन - उजास में मयंक-बिंब मिलिगो॥

चलन चहत प्रान-प्यारो परदेश आली,
आकुल ह्वै हियरा हमारो सुधि लेखै ना।
चकि-चकि रहत चहूँकित चितै कै चित्त,
बेदन-बिबस ह्वै कै सुरति सरेखै ना।
हरिऔध प्यारे सग करन पयान ही मैं,
आपनी भलाई पापी प्रान हूँ परेखै ना।
बिलखि-बिलखि भरि-भरि बार बार वारि,
नैनहूँ निगोरो आज नैन भरि देखै ना॥

बावरी ह्वै जाती बार बार कहि वेदन को,
बिलखि-बिलखि जो बिहार थल रोती ना।
पीर उठे हियरा हमरो टूक टूक होत,
ध्याइ प्राननाथ जो कसक निज खोती ना।
हरिऔध प्यारे के पधारि गये परदेस,
नैन नसि जात जो सपन सग सोती ना।
तन जरि जातो जो न अँसुआ ढरत आली,
प्रान कढि जातो जो प्रतीति उर होती ना॥

चूमि चूमि प्यार ते उचारती वचन ऐसे,
जाते प्रेम प्रीतम को तोपै भूरि छावनो।
मोहित ह्वै तेरे चोच मोहि चारु चामीकर,
हरिऔध हीरा हेरि हिय पै लगावतो।
ए रे काक बोलत कहा है ककनीन बैठि,
मजुल मनीन तेरे चरन जरावतो।
नैनन को तारो बाकी बड़ी अँखियान-वारो,
प्यारो प्रान वारो जो हमारो कंत आवतो॥

भोर भये पै पधारे कहा भयो,
मेरी सदा सुख ही की घरी है।
ए री कछू हरिऔध करैं,
हमैं तो उनकी परतीति खरी है।
बूझि विचारि कहै किन बावरी,
बीच ही मैं कत जाति मरी है।
साँवरे प्रेम पसीजि परी नहिं,
मो अँखिया अँसुआन भरी है॥

कत पिचकारी कर माँहि लीने आवत है,
ब्रज मै जनात तू तो निपट हठीलो है।
नेक मेरी बातन को भूलि ना करत कान,
होगी के गुमान मैं गजब गरबीलो है।
हरिऔध कहा लाभ अनरस कीने होत,
सुबस बसे हूँ ब्रज कैसो तू लजीलो है।
ऐ हो लाल वा पे रग छोरिबो छजत नाँहि,
गात-रग ही सो वाको बसन रगीलो है॥

बीर बरसानो छोरि गोकुल गई ही आज,
जान्यो ना गोपाल ऐसो ऊधम मचाय है।
सारी बोरि दीनी सारौ गात करि लीनो लाल,
जैसो छल कीनो ताहि कैसे बतराय है।
हरिऔध अब तो न आपने रहे है नैन,
करि कै उपाय कौन इनै समझाय है।
अग-लाग्यो रंग तो सलिल सो छुड़ाय लै है,
नेह सग लाग्यो तासों कैसे छूटि पाय है॥

छोरो रग चाव सों हमारे इन अंगन पै,
कबहूँ कछू ना लाल भूलि हम कहि है।
बोरि दीजै सिगरी हमारी सारी केसर मै,
मन मैं बिनोद मानि मौन साधि रहि है।

हरिऔध अँखियाँ छकी हैं गावरी छबि मैं,
इन पै दया ना कीने क्यों हूँ ना निबहि है।
परिबो पलक को तो कैसहूँ सहत प्यारे,
परिबो गुलाल को गोपाल कैसे सहि है॥

ताकि कै मारत हो पिचकारी,
तऊ मन मैं तनको नहि खीजत।
रंग मैं सारी भिगोय दई हम,
ताको उराहनो हूँ नहिं दीजत।
पै इतनी विनती हरिऔध,
मया करि क्यो हमरी न सुनीजत।
साँवरे - रंग रँगी अँखियान कों,
प्यारे गुलाल ते लाल क्यों कीजत॥

—:oo:—